संजय की कलम से ..

क्षमा

जो क्रोधी और असहिष्णु होता है, उसे अंत में क्षमाशील के सामने झुकना ही पड़ता है। क्षमाशील व्यक्ति ही सहनशील होने के कारण सदा विजयी होता है। वास्तव में ईर्ष्या और द्वेष की भावना अज्ञानता का लक्षण है। इससे हम दूसरों को तो शायद ही दुख दे पाते हों, परंतु स्वयं अवश्य दुखी होते हैं। इससे हमारी शारीरिक और आत्मिक दोनों शक्तियों का ह्रास होता है। अपकार की भावना से आत्म-ज्योति मलिन होती है लेकिन अपकारी पर उपकार करने से यह ज्योति प्रज्वलित हो उठती है।

यदि कोई व्यक्ति उन्माद के वशीभूत होकर अपने शरीर का अंग काटने लगे तो देखने वाला उस पर दया करके उसे बचाने की ही कोशिश करेगा, ना कि उसका अनुकरण करके अपना भी अंग काटने लगेगा। ठीक इसी प्रकार, आत्माभिमानी व्यक्ति का हृदय क्रोधी, विकारी और अपकारी के प्रति दया, करुणा तथा क्षमा से भर जायेगा और वह उसे सन्मार्ग पर लाने की कोशिश करेगा। उसे अपकार्य करता देखकर यदि वह स्वयं भी वैसा ही करने लग जाये तो यह गोया उसका उन्मत्त होना ही है।

आज भक्त मंदिरों में जाकर भगवान से प्रार्थना करते हैं कि 'हे भगवान! हमारे पाप क्षमा कर दो।' लेकिन स्वयं क्षमाशील न बनकर, वे बदले और ईर्ष्या, द्वेष की अग्नि में जलते रहते हैं। निस्संदेह, परमात्मा क्षमा के सागर हैं लेकिन उनकी क्षमा का अधिकारी भी वही व्यक्ति हो सकता है जो स्वयं क्षमाशील हो।

हमें यह याद रखना चाहिए कि क्षमा ही मनुष्यात्मा का भूषण भी है और धर्म भी। क्षमा से बढ़कर संसार में और कोई भी तप नहीं है तथा अपकारी पर उपकार करना ही सच्चा देवत्व है। आत्माभिमानी मनुष्य सदा क्षमाशील होगा। जो मनुष्य सभी को आत्मा रूप से देखेगा, उसमें क्रोध, द्वेष और अपकार की भावना उत्पन्न ही नहीं होगी। वह तो सदा अन्य आत्माओं को भाई-भाई की दृष्टि से अर्थात् एक परमपिता की संतान होने के नाते से, आपस में स्नेह और सहयोग की दृष्टि से ही देखेगा। देही-अभिमानी व्यक्ति सदा शांतचित्त और अंतर्मुखी होगा और उसे क्रोध तो लेश-मात्र भी छू नहीं सकेगा। वह विकारों के वशीभूत नहीं होगा। परमात्मा से योगयुक्त होने के कारण वह अपनी आत्मिक शक्ति का हनन नहीं करेगा। अतः आत्म-द्रष्टा व्यक्ति के मन में अपकार करने वाले व्यक्ति के प्रति भी दया का भाव उत्पन्न होगा, क्रोध का नहीं। ❖

अमृत-सूची

- परधनम् लोष्टवत (*सम्पादकीय*) 4
- इन्सानियत का कारखाना 6
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के.. 7
- पुरुषोत्तम संगमयुग और 9
- मेरा प्रीति-पात्र शिव 11
- पत्र संपादक के नाम 12
- महाविनाश कब और कैसे....13
- भूख – शान्ति की या.....15
- शुभ भावना.. (*कविता*) 17
- आठवाँ आश्चर्य..... 18
- तेरा आभार (*कविता*) 19
- प्रेम सागर ने छलकाया 20
- पुरुष की कमजोरी नहीं 21
- बाबा ने दी परीक्षा में..... 22
- योग भट्ठी..... 23
- स्पर्श अदृश्य का (*कविता*) ..24
- ज्ञानामृत..... 25
- पश्चिम में योग का परचम.... 26
- ज्ञान-दान योजना.....29
- सचित्र सेवा समाचार..... 30
- दोषदृष्टि दूर करें.....32
- सचित्र सेवा समाचार..... 34

सदस्यता शुल्क

	वार्षिक	आजीवन
भारत		
ज्ञानामृत	80 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	80/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	800 /-	8,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	800/-	8,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन- 307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें - 09414006904, 09414154383

परधनम् लोष्टवत

जिस व्यक्ति के पास पैसा (धन) नहीं वह गरीब माना जायेगा परंतु जिसके पास केवल पैसा है, वह तो और भी गरीब है क्योंकि ज्ञान का धन, गुणों का धन, चरित्र का धन, श्रेष्ठ कर्मों का धन – इनका न होना भी तो भारी गरीबी है।

धनी कौन?

कई बार हम सुनते हैं, अमुक व्यक्ति बहुत धनी है पर धनी होने का मायना क्या है? जहाँ तक पेट भरने का सवाल है, उसे तो गरीब और अमीर दोनों भरते हैं और इतना-सा कर लेने से तो कोई धनी नहीं हो जाता। यदि दूसरे दस या बीस पेट भरने की जिम्मेवारी उठाई जाए तब तो अमीर होने का अर्थ समझ में आता है, नहीं तो मात्र धन का संग्रह कर लेना, धन को मालिक बनाकर उसकी चौकीदारी और चाकरी करने जैसा ही है। यह चाकरी ऐसी है जिसमें ना कोई छुट्टी है और ना कोई तनख्वाह।

कितना धन अपना है?

जो धन बैंक में, पेटी में, जेब में पड़ा है वह अपना नहीं है। उसमें से जो ईश्वरीय श्रीमत प्रमाण, ईश्वरीय कार्य में लग जाये, वही अपना है। संग्रह के रूप में पड़े धन में से क्या पता कितना जुर्माना भरने में, मुकदमे में, डॉक्टर की फीस में देना पड़े और कितना किसी चोर के हाथ लग जाये या अग्नि की भेंट चढ़ जाये। कितना व्यसनों में और कितना आडंबरों में जाये। जो खा लिया, वह भी सार्थक नहीं, उसमें भी जितना हज़म हो जाये, वही सार्थक है। जो खाने के बाद गोलियों द्वारा बाहर निकालना पड़े, उस खाये हुए का क्या लाभ?

संग्रह है पर सदुपयोग नहीं

आज का समाज धन के पीछे बावला हुआ समाज है। धन का सुख नहीं है पर धन की होड़ है। धन का सदुपयोग नहीं है पर संग्रह है। धन से पुण्य अर्जन नहीं वरन् पाप से अर्जन और पाप में ही विसर्जन है। धन के कारण होने वाले अपराधों की बाढ़ है। कहता है, पापी पेट सब करवाता है पर पेट तो पाव आटे में भर जाता है। पेट के नाम पर इकट्ठा करने वाले पेट में डाल कहाँ पाते हैं? दाल का फीका पानी, फीका दलिया, उबली सब्जी, सूखी चपाती और दो गोलियाँ – इतना आहार भर रह जाता है। नींद आती नहीं, धन के साथ-साथ शरीर में रोगों का भी संग्रह हो रहा है। एक के साथ एक मुफ्त चीज़ मिलने का ज़माना जो है। फिर इस क्षणभंगुर जीवन में, परलोक तक साथ न निभाने वाले नश्वर धन के ऊपर नींद, भूख, स्वास्थ्य, ईमान, शान्ति – सब कुछ वार देने का क्या औचित्य? किसी ने सत्य ही कहा है –

साईं इतना दीजिए,
जा में कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ,
साधु न भूखा जाये।।

अर्थात् इतना धन हो जो स्वयं की पालना, परिवार की पालना और परोपकार-परमार्थ के कार्य होते रहें।

कीमत वसूलता है
वैभव का सुख

लालच अपनी कीमत वसूलता है। अनावश्यक संग्रह लालच का ही प्रतिरूप है। यह नकारात्मक उपलब्धि है। वैभव की चकाचौंध में उलझने की भारी कीमत चुकानी पड़ती है। इसके लिए समय, श्रम और ऊर्जा तीनों का क्षरण होता है। ऐश्वर्य की चमचमाहट में मन रमने लगता है, पाने और भोगने को लालायित होता है, न पा सकने की स्थिति में अन्य जुगाड़ भिड़ाने लगता है। बीच बाज़ार भ्रमित मन सोचता है, किसे लिया जाये, किसे छोड़ा जाये। सब कुछ बटोरने को जी चाहता है। बटोरकर थोड़ी देर के लिए खुश होता है, घर ले जाकर

थोड़ी देर उसकी चमक से चमकता है, औरों को दिखाकर इस चमक को बढ़ाना चाहता है, प्रशंसा करने वाले को धन्यवाद और न करने वाले को परोक्ष रूप से उपालंभ देता है। सुख-भोग के नाम पर हमारे पास ढेर सारा संग्रह हो जाता है पर कुछ दिन बाद और अच्छी चीज़ें बाज़ार में आ जाती हैं। अब मन उनकी ओर दौड़ने लगता है। इस प्रकार वस्तुओं से चिपका मन, प्रतिपल नई चीज़ों को पाने को छटपटाता है। पर इस भयावह कुचक्र में फँसकर उसे संचित पुण्य खोना पड़ता है। अलग-अलग सुख-भोग के लिए पुण्य क्षय होने की मात्रा भी अलग-अलग है। सबसे अधिक पुण्य का आगार नष्ट होता है काम-वासना को भड़काने वाली बातों और पदार्थों से। फिर जो चीज़ें अहंकार, ईर्ष्या, आलस्य को जन्म दें, वे भी पुण्यों का क्षय करती हैं। **आज हमारे पास पदार्थों का संग्रह है, पुण्यों का नहीं। इसी का परिणाम हैं तन-मन और जन से उत्पन्न की गई, अनसुलझी समस्याएँ।**

पदार्थ नहीं हरते व्याधियाँ

एक व्यक्ति ने जीवन की सारी श्रम, शक्ति, धन अच्छी-अच्छी चीज़ों के संग्रह में लगाया। घर तो चकाचौंध से भरा पड़ा था। एक दिन अचानक उसके सिर में दर्द हुआ। रात के गहन सन्नाटे में उसने अपने योगी-तपस्वी मित्र को फोन किया, मेरे सिर में दर्द है, कुछ करो। योगी ने हँसते हुए कहा, तुमने सारा जीवन जो भोग-सामग्री जुटाई है, वह तेरे आस-पास बिखरी पड़ी है, उसे धीरे से कह, सिरदर्द के लिए कुछ कर। पर हम जानते हैं ये भोग के साधन तन-मन की व्याधियाँ दे तो सकते हैं पर हर नहीं सकते। इन्हें मिटाने के लिए भगवान या भगवान के आज्ञाकारी त्यागी-तपस्वी बच्चों की शरण में ही जाना पड़ता है।

धन बुरा नहीं है, धन का दुरुपयोग बुरा है। अध्यात्म कहता है, धन को भोग का नहीं वरन् योग का साधन बनाइये। आपका धन, आपकी साधना को बढ़ाए। वह बुद्धि को दिव्य बनाने के निमित्त बने। श्रेष्ठ कर्मों के खाते को बढ़ाए। दुआ और पुण्य अर्जित कराए। धन का ईश्वरीय सेवा में इस तरह नियोजन हो कि एक तरफ संसार के लोगों का कल्याण हो, दूसरी तरफ आगे के जन्मों में हमारे सुख का रास्ता खुलता जाए।

क्या कहती है भारतीय संस्कृति

भारतीय संस्कृति कहती है,

मातृवत् परदारांश्च
परद्रव्याणि लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतानि
यः पश्यति स पश्यति।।

जो व्यक्ति पर-स्त्री को माता के समान, पराये धन को मिट्टी के समान और सर्वप्राणियों के प्रति आत्मीय भाव रखकर उनको अपनी आत्मा के समान देखता है, वस्तुतः वही ठीक से देखता है।

हमारी संस्कृति किसी अन्य द्वारा उपार्जित संपत्ति पर जबर्दस्ती अधिकार जमाने, छीनने और झपटने की अनुमति नहीं देती। अनीति से उपार्जित या बिना श्रम का पैसा अछूत है। धन को मात्र हड़पकर बैठ जाना ऐसे ही है जैसे सर्प का कुंडली मारकर बैठ जाना। स्वयं के लिए तो उस धन का कोई उपयोग नहीं और उसे उपयोग वाली जगह लगने न देना ऐसा ही है जैसे घास के ढेर पर कुत्ता बैठा है, न तो वह घास खाता है और न ही थके बैल को घास खाने देता है। **जैसे अलाय डालने से सोना खोटा हो जाता है, उसी प्रकार बेईमानी, भ्रष्ट आचरण की खाद पड़ने से व्यक्ति भी खोटा हो जाता है। खरा वही है जो अंतरात्मा की आवाज़ पर ईमानदारी की कमाई से संतुष्ट है। भारतीय संस्कृति छीनने, झपटने से तो रोकती ही है, इससे भी आगे कहती है, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा, मागृधः कस्यास्विद् धनम्।' अर्थात् अपनी संपत्ति का भी त्याग के साथ उपभोग करो, किसी के धन को लालची दृष्टि से मत निहारो। किसी को महल में रहने की इच्छा हो, यह बुरी बात नहीं है परंतु वह आज से ही**

महल खड़ा करने का कार्य आरंभ कर दे, दूसरे के बने-बनाये महल को लोभ की दृष्टि से न देखे।

समयानुसार शब्दों के अर्थों में परिवर्तन आ जाता है। 'परधनम् लोष्ठवत्' यह बात तो ऋषियों ने द्वापरकाल में तब कही थी जब इस सृष्टि को 2500 वर्ष आगे तक चलाने का प्रश्न था। अब तो वे 2500 वर्ष बीत चुके हैं और पुराने कल्प के समापन का समय आ गया है। महापरिवर्तन का बिगुल बजने ही वाला है। प्राकृतिक प्रकोप कब किसके धन-तन को एक झटके से बिना चेतावनी के ही हर लें, कुछ कहा नहीं जा सकता। **बद से बदतर और बदतम होती परिस्थितियों के समक्ष अपना ही सब कुछ असुरक्षित है तो दूसरे की तरफ आँख उठाकर क्यों देखें। अब तो स्वधन भी लोष्ठवत् ही है। यदि समय रहते ईश्वरीय कार्य में खर्च हो गया तो मोहर बराबर, नहीं तो मिट्टी हो जाने वाला है।** ईश्वरीय महावाक्य हैं –

किसी की दबी रही धूल में,
किसी की राजा खाय।
किसी की चोर लूट ले जाये,
किसी की आग जलाए।
सफल उसी की जानिए,
जो धनी के नाम लगाए।

– ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश

इन्सानियत का कारखाना

ब्रह्माकुमारी अमिता मराठे, इन्दौर

एक बार एक सज्जन, महान वैज्ञानिक आइंस्टीन के पास आये। उन्होंने कुछ देर तक उनसे इधर-उधर की चर्चा की, फिर बोले, आज विज्ञान ने एक से बढ़कर एक सुख-सुविधाओं के साधन बनाने में सफलता पा ली है, अब पलक झपकते ही दूरियाँ तय हो जाती हैं, कुछ ही क्षणों में सुविधाओं की सारी चीज़ें हमारे पास आ जाती हैं मगर फिर भी जाने क्या बात है कि समाज में अशांति, असंतोष, कलह, बुराई पहले की अपेक्षा ज्यादा पनप रही है, आखिर कारण क्या है? इतनी सुविधायें प्राप्त होने पर मानव को प्रसन्न होना चाहिए। आइंस्टीन बोले, मित्र, हमने शरीर को सुख पहुँचाने वाले तरह-तरह के साधनों को खोजने में अवश्य सफलता प्राप्त कर ली है किन्तु क्या हमने इंसानियत का ऐसा कोई कारखाना लगाया है जिससे लोगों के अंदर मर रही संवेदनाओं को जीवंत किया जा सके, उनके अंदर त्याग, ममता, करुणा, प्रेम आदि को उत्पन्न किया जा सके, जहाँ पर मन को आनन्द देने वाले साधनों का निर्माण किया जा सके। कुछ देर सोचने के बाद उन सज्जन ने अपनी जिज्ञासा रखी, भला इंसानियत के कारखाने का निर्माण कैसे संभव है, इंसानी भावनायें तो इंसान के अंदर ही पनपती हैं, कारखानों में नहीं। आइंस्टीन ने कहा, मित्र, बिल्कुल ठीक कहा आपने।

संवाद का सार यही है कि जिसका मन इंसानियत का महत्व जाने, उसे जीवन में धारे, वही सुखी है। **इंसानी गुण पैदा करने का कोई कारखाना नहीं हो सकता परंतु यह प्रत्यक्ष सत्य है कि सन् 1937 में एक अद्भुत कारखाने की स्थापना हुई, जहाँ इंसान को इंसानियत में ही नहीं, देवत्व में ढाला जा रहा है। परमपिता परमात्मा शिव स्वयं इस कार्य को राजयोग की शिक्षा द्वारा साकार कर रहे हैं।** इस श्रेष्ठ शिक्षा को पाने का हक सब इंसानों को है परंतु यहाँ आता और ठहरता वही है जिसे सच्चा इंसान और फिर देव समान बनना हो। जीवन श्रेष्ठ बनाने के लिए नज़दीकी ब्रह्माकुमारी सेवाकेन्द्र पर जाकर ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करें। दुनिया में यही एकमात्र इंसानियत और देवत्व का कारखाना है। ❖

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्नः- साइलेंस की शक्ति की उपलब्धियाँ क्या हैं?

उत्तरः- 1- साइलेन्स में रहने से कैचिंग पावर और टचिंग पावर आती है जो समय पर बहुत मदद करती है। जैसे साइंस एक सेकेण्ड में क्या से क्या कर सकती है, साइलेंस की शक्ति उससे भी कई गुणा ज्यादा है। स्वयं को पहचानने के लिये गहन साइलेंस चाहिए, बाबा को पहचानने के लिये भी साइलेंस चाहिए, ड्रामा के हर दृश्य पर अडोल रहने के लिये भी साइलेंस चाहिए। अगर साइलेंस शक्ति नहीं तो तीनों की समझ नहीं है। बाकी सफेद साड़ी पहन ली, क्लास में हाजिर हो गये, ज्ञान सुना लिया, यह बड़ी बात नहीं है। गहराई को साइलेन्स से ग्रहण करना है।

2- बाबा ने ओम् की ध्वनि से सबको खींच लिया। और कुछ ज्ञान नहीं था, पर उस साइलेंस की शक्ति से कितने समर्पित हुए। साक्षात्कार का पार्ट शुरू हुआ। फिर शिवबाबा ने ब्रह्मा द्वारा जीवन जीना सिखाया, क्या खाना है, क्या पहनना है, बिस्तर कैसा होना चाहिए, सफाई कैसी होनी चाहिए, सब सिखाया।

3- पहले साइलेंस, फिर प्यार, फिर ज्ञान। मुरली सुनकर, सारी रात कोने में जाकर योग लगाते थे। साइलेन्स का अनुभव करते थे। जो गुप्त तपस्या करते हैं वे बाबा को अच्छे लगते हैं। सेवा भी करते हैं लेकिन कोई आवाज़ नहीं। फिर बात निकली ''कम बोलो, धीरे बोलो, मीठा बोलो''। बाबा निरीक्षण के लिए चक्कर लगाते थे, बाबा को देख साइलेंस में रहने की प्रेरणा मिलती थी।

प्रश्नः- आपके अंदर बार-बार कौन सी बात आती है?

उत्तरः- अभी मुझे तो चिंता नहीं चितवना है - अन्दर बार-बार यह बात आती है, बाबा, जो बाकी थोड़ी कमी रही है वह खलास हो जाए। छोटी कमज़ोरी भी बहुत मोटी होती है, मोटी दिखाई पड़ती है, छोटी दिखाई नहीं पड़ती है। है छोटी पर अन्दर मोटी है, बड़ा नुकसान करने वाली है, करती है। अभी समय है और मधुबन में अपने आपको देखने का काम अच्छा है। अपने को अच्छी तरह से देखना, जानना फिर बाबा को सामने रखना। इस समय अपने आपको बदलना क्योंकि हम बदलेंगे तो जग बदलेगा। जग को बदलने की ज़िम्मेवारी मेरी नहीं है, और बदलें उसमें समय नहीं गंवाओ, यह बदले, यह बदले... समय व्यर्थ करना है। मैं सच्चे दिल से पुरुषार्थ करूँ, मैं ऐसे बदलूँ जो मेरे को देख कइयों को बदलना सहज हो जाए। मुझे बदलके क्या बनने का है, यह तो बाबा ने बड़ा स्पष्ट आइना दिया है।

प्रश्नः- सूक्ष्म कमज़ोरी का कारण क्या है?

उत्तरः- बाबा ने हम सबको सर्वशक्तियाँ प्रयोग करने के लिए दी हैं। अष्ट शक्तियों का ज्ञान है परन्तु प्रयोग करने के लिए सर्वशक्तिवान बाप स्पेशल शक्ति देता है, अगर शक्तियों का ज्ञान है पर मेरे जीवन में प्रयोग नहीं हो रही हैं तो मानो कि

सर्वशक्तिवान बाप से संबंध नहीं है इसलिए अन्दर सूक्ष्म कमज़ोरी छिपके बैठ गई है, उसको देह अभिमान साथ दे रहा है इसलिए मीठे-मीठे बाबा के मीठे महावाक्य हैं: 1. देहीअभिमानी भव 2. अशरीरी भव 3. विदेही भव। यह बाबा रोज़ सुनाता है यानी आत्मा में जो देह का भान भर गया है वो सारा निकल जाये। 'मैं आत्मा, यह शरीर', इस गुप्त अभ्यास से अशरीरी बनने का रस बैठ जाये। कार्य-व्यवहार में रहते, सेवा करते 'मैं आत्मा हूँ, मैं आत्मा हूँ... इस शरीर की कर्मेन्द्रियों द्वारा कर्म कर रही हूँ, देख भी रही हूँ, बात भी कर रही हूँ... पर मैं आत्मा हूँ', ऐसी आत्म-अभिमानी स्थिति में रहने के लिए इतना ध्यान रखना होगा। जैसे ब्रह्मा बाबा का आत्म अभिमानी स्थिति में रहने का स्वाभाविक अभ्यास था। ऐसे चलते-फिरते, खाते, कर्म करते पूरा ध्यान रहे। ऐसा अभ्यास चाहिए जो मेरे से कोई आवाज़ से और व्यक्त भाव से बात भी न करे।

प्रश्नः- सहजयोगी बनने वालों के लक्षण क्या होंगे?

उत्तरः- मेरे कारण से किसी का व्यर्थ संकल्प न चले क्योंकि उससे मेरा योग नहीं लगेगा। जो अपने ऊपर इतना ध्यान रखते हैं वो सहजयोगी, नेचुरल योगी बन जाते हैं। ऐसों का चलना भी और देखना भी सेवा करता है। जिसे सेम्पल बनना हो तो सिम्पल रह करके सच्चा तीव्र पुरुषार्थ करने में लग जाए। यह शब्द न कहे, पुरुषार्थ क्या होता है? सिम्पुल बन करके सैम्पुल बनना। मैं आत्मा हूँ, बाबा की हूँ, घर जाना है, उसके भी पहले समर्पण, मेरा कुछ नहीं, इसको समर्पण कहा जाता है। फिर मन-वाणी-कर्म श्रेष्ठ, संकल्प, श्वास, समय सफल। हमारे अन्दर की भावना है, हम बदलेंगे, जग आपेही बदलेगा। अभी बदलने में इतना समय नहीं लगायेंगे। अभी भी कोई न कोई अपने स्वभाव-संस्कार के वश में हैं। ऐसा मेरा स्वभाव न हो जो किसी को भी मेरे स्वभाव अनुसार चलना पड़े। नेचुरल नेचर बाप जैसी हो। समय कहता है, कर ले, बाबा कहता है, तुम अभी करेंगे तो मैं तुम्हारा साथी हूँ। तो ऐसी सेवा करने के लिए साक्षी हो करके ड्रामा पर अडोल-अचल रहो।

प्रश्नः- दुनिया से पाप समाप्त कब होगा?

उत्तरः- कभी किसी को बाहर की दुनिया याद न आये, बाहर का खाना याद न आये, इसलिए बाबा के संग खाओ, खेलो, हंसो, नाचो। संगम का समय बहुत थोड़ा है, टाइम पूरा हो जायेगा, विनाश आयेगा, बाबा चले जायेंगे। मैं स्वयं बाबा के सामने हाजिर रहूं, बाबा मेरे साथ रहे, यही समय है। बाबा के साथ रहना और साक्षी होकर पार्ट बजाना, यह समय की कीमत को बढ़ाना है। बाबा से जो मिलता है वो जी भरके लो, सबकी दुआयें लो, पुण्य का खाता बढ़ाओ। पाप का खाता एकदम खत्म कर दो। हमारा पाप खत्म होगा तो दुनिया से भी पाप खत्म हो जायेगा।

प्रश्नः- अब पाँच तत्वों को कौन-सा बल चाहिए?

उत्तरः- जैसे साइन्स ने सारी दुनिया को अपने हाथों में कर लिया है, कदम-कदम पर साइंस काम आ रही है, संगमयुग पर अंतिम समय में साइंस ने अपना कमाल दिखाया है, ऐसे हमारी साइलेन्स क्या नहीं कर सकती। मनुष्यों के दिमाग में आ गया है कि मनुष्य जो चाहे वह कर सकता है। प्रकृति के पाँच तत्वों को भी हाथों में ले लिया। पाँच तत्व बिचारे, बिचारे हो गये हैं। अब उनको चाहिए साइलेन्स का बल। सारी दुनिया साइंस के दबाव, प्रभाव में है, उसके बिना कुछ भी कर नहीं सकते हैं। हम बाबा के बच्चे साइलेन्स से शक्ति ले रहे हैं। अगर साइलेन्स हमारे में नहीं होगी तो शक्ति कैसे आयेगी। साइलेन्स की शक्ति से व्यर्थ समाप्त हो जाता है। बाबा कहते, बच्चे जो बीत गया, उसे भूल जा। ❖

पुरुषोत्तम संगमयुग और स्वर्णयुग में स्वर्ण की महिमा की दास्तान

● ब्रह्माकुमार रमेश शाह, मुंबई (गामदेवी)

गतांक में हमने पढ़ा कि धन या सोना मानव की आध्यात्मिक उन्नति में बाधक नहीं है, बाधक हैं विकार जैसे कि काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि। सोना और संपत्ति तो देवताओं के पास भी अखुट थी पर उनका जीवन संपूर्ण निर्विकारी था। वे मर्यादा पुरुषोत्तम तथा डबल अहिंसक थे...। अब आगे पढ़िए...

एक जमाने में भारत में इतना सोना था जिसके बारे में इतिहास में वर्णन आता है कि अंग्रेज़ सरकार का प्रतिनिधि रॉबर्ट क्लाइव जब भारत से लंदन गया तो वह अपने साथ 300 जहाजों में सोना भरकर ले गया। रास्ते में एक जहाज समुद्र में डूब गया तो उसका समाचार सुनने से क्लाइव पागल हो गया। सोने के भारत से कितना सोना बाहर चला गया, उसका हिसाब निकालना मुश्किल है। एक ज़माने में भारत में जो सोना था और अभी जो है, उसमें जमीन-आसमान का अंतर है, जिसे मिटाना है। इसलिए सोने को भौतिक साधन न समझ आध्यात्मिक उन्नति का साधन समझ कारोबार करें। सोने को माया या ईश्वरीय सेवा का साधन समझना हमारे हाथ में है इसलिए शिवबाबा ने कहा है कि अपना सर्वस्व सफल करो तो शिवबाबा हमारे द्वारा सफल धनराशि को पद्मगुणा करके देगा।

इसी संदर्भ में एक प्रश्न उठता है कि सतयुग में इतना सोना कहाँ से आयेगा जिसके बारे में बाबा मुरलियों में बताते हैं कि वहाँ पर सोने के महल होंगे...आदि-आदि। इसका उत्तर सहज है। भारत में वर्तमान समय भी गृहस्थ व्यवहार में रहने वाले बहन-भाइयों के पास कितना सोना है, उसका अंदाज लगाना मुश्किल है। फिर भी भारत के अर्थशास्त्रियों ने अंदाज लगाया है कि भारत में रहने वाले परिवारों के पास 15 हजार से 20 हजार टन सोना अवश्य ही होगा। इसके अलावा भारत में प्रतिवर्ष 500-600 किलो सोना विदेशों से आयात होता है और भारत सरकार के पास भी सोना रिजर्व है। अगर 16 हजार टन सोना भारतवासियों के पास है और इसे सतयुग की 9 लाख आबादी के बीच विभाजन करें तो अंदाजन 18 किलो सोना हरेक के पास हो सकता है। इस प्रकार से सोचें तो सतयुग में सोने की कमी नहीं होगी और वहाँ पर सोने का कारोबार विभिन्न रूप से चल सकता है।

आज भी भारत में कई ऐसे स्थान हैं जहाँ सोने के मंदिर आदि बनते हैं तो कई जगह पर सोने का पानी चढ़े हुए स्वर्ण मंदिर भी बनते हैं अर्थात् इतनी महंगाई के जमाने में भी स्वर्ण का उपयोग भारत के लोग करते हैं, तो सतयुग में जब सोना इतना सस्ता होगा तो क्यों नहीं ज्यादा से ज्यादा मात्रा में सोने का उपयोग वहाँ के लोग करेंगे। अभी भी जमीन के अंदर सोना है जिसका अंदाज मैंने पहले लिखा है। इसके अलावा समुद्र के अंदर भी काफी सोना चला गया है। सतयुग आने से पहले जब उथल-पुथल होगी तो समुद्र के अंदर छिपी चीजें बाहर आ सकती हैं। जैसा कि गायन है कि सोने की द्वारिका समुद्र में डूब गई। विदेशों में भी मानते हैं कि अटलांटिस नामक स्वर्ण नगरी समुद्र में डूबी हुई है। दोनों प्रचलित कथाओं से सिद्ध है कि समुद्र में काफी सोना छिपा हुआ है और वह सब बाहर आयेगा।

पहले लिखे लेख में बताया था कि विभिन्न देशों की सरकारों के पास भी

सोने के स्टॉक हैं। यह स्टॉक भी उथल-पुथल में बाहर आ जायेगा। इन सब बातों के आधार पर कह सकते हैं कि सतयुग में सोने की कमी नहीं होगी इसलिए सतयुग को स्वर्णयुग, गोल्डन एज या सोने की चिड़िया कहा जाता है। अवश्य ही इन सब बातों के पीछे भी कोई आध्यात्मिक रहस्य छिपा होगा जिन पर विचार-विमर्श करने की जरूरत है। इस प्रकार शिवबाबा द्वारा कही गई सब बातों के प्रमाण धीरे-धीरे मिलते रहते हैं जिससे शिवबाबा की बातों को सहज रीति स्वीकार कर सकते हैं।

सतयुग में सोने को माया नहीं कहते परंतु जब से द्वापरयुग शुरू हुआ और विकारों की प्रवेशता हुई तो लोभ विकार भी शुरू हुआ। सोने के कारण विशेष लोभवृत्ति उत्पन्न हुई। सोने को लूटने के लिए युद्धों की शुरूआत हुई। इसलिए स्वर्ण को माया समझकर उससे दूर रहने के आध्यात्मिक प्रयत्न प्रारंभ होने लगे। इस प्रकार समय के परिवर्तन के कारण मनुष्य की मनोवृत्ति में परिवर्तन हुआ, जिस कारण ही सोने को माया समझकर उसे छोड़ने का प्रयत्न किया गया।

इसी संदर्भ में एक बात ध्यान रखने की है कि द्वापरयुग के प्रारंभ में जो भी धर्मस्थापक आये, वे ज्यादातर राजाई घराने से आये जैसे इब्राहिम, गौतम बुद्ध, महावीर आदि-आदि। इसके बाद ईसाई धर्म के स्थापक ईसा मसीह का जन्म साधारण परिवार में हुआ। उन्होंने त्याग-तपस्या की और अपने धर्म का प्रचार किया। यह भी विचार करने की बात है कि द्वापरयुग की शुरूआत में जो भी धर्मस्थापक थे, वे राजाई परिवार से कैसे निकले और कैसे उन्होंने त्याग-तपस्या द्वारा अपने धर्म के विचार समाज में फैलाये जिस आधार पर विभिन्न धर्मों के शास्त्र बने। इन धर्मशास्त्रों में त्याग की महिमा बताई गई है। ईशोपनिषद् में पहला श्लोक है – 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' अर्थात् इस सृष्टि में जो भी चीजें हैं, उनका त्याग से उपभोग करो। इस प्रकार पहला-पहला वाक्य त्याग के बारे में है। इस प्रकार द्वापरयुग से ही त्याग आदि मूल्यों को आदर्श के रूप में रखा गया और परिणामरूप धन, जो ईश्वरीय सेवा का आधार है, उसे त्याग कर जीवन को श्रेष्ठ बनाने का लक्ष्य दिया गया। दूसरे उपनिषद में लिखा है 'त्यागाम् शान्ति अनन्तरम्' अर्थात् त्याग से ही अनंत शांति मिल सकती है। उस समय समाज में गलत मनोवृत्तियाँ फैलने लगी थीं जिन पर नियंत्रण करने के लिए उन्हें इस प्रकार के मूल्यों की बातें समाज के सामने लक्ष्य के रूप में रखनी पड़ी ताकि उसी प्रकार के लक्षण समाज में आ जायें।

द्वापरयुग में, सतयुग-त्रेतायुग के महानायकों श्रीराम, श्रीकृष्ण को लेकर रामायण, महाभारत, भागवद् आदि ग्रंथों की रचना हुई और जनसाधारण के सामने उनके जीवनमूल्यों को उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया। इसका प्रमाण है आठवीं सदी में भट्टनारायण नाम के दर्शनशास्त्री ने 'वेणीसंहारम्' नाटक की रचना की और इसकी भूमिका में लिखा कि श्रीराम और श्रीकृष्ण हमारी श्रद्धा के केंद्रबिंदु हैं। महाभारत को उन्होंने 'वेणीसंहारम्' नाटक के रूप में लिखा जिसमें पहली बार द्रौपदी वस्त्रहरण की बात बताई गई। इससे पूर्व की महाभारत कथा में द्रौपदी वस्त्र-हरण का वृत्तांत नहीं था परंतु लोगों का ध्यान रामायण और महाभारत के प्रति आकृष्ट करने के लक्ष्य से उसने उसे नाटकीय रूप में प्रस्तुत किया। मिसाल के तौर पर महात्मा गांधी के जीवन चरित्र को लोगों के सामने आदर्श रूप में रखने के लिए रिचर्ड एटनबेरो ने महात्मा गांधी के जीवन चरित्र पर 'गांधी' फिल्म बनाई और उसे कई पुरस्कार भी मिले। इस फिल्म से लोगों को फिर से महात्मा गांधी के जीवन चरित्र को पढ़ने की प्रेरणा मिली।

सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग इन चार युगों में समय के कारण परिवर्तन

हुआ या शिवबाबा की भाषा में कहें तो 16 से 14, फिर 8 और फिर लकीर के मुआफिक कला रह गई। इस कारण मूल्यों को सिद्धांतों के रूप में प्रत्यक्ष करने की बातें हुईं। समाज में जेल आदि का कारोबार शुरू हुआ जिससे उन आत्माओं के जीवन में पश्चाताप हो सके। भारत में भी अंग्रेज़ों के राज्य के दौरान स्वतंत्रता सेनानियों को जेलों में भेज दिया जाता था ताकि उनके नेतृत्व से समाज वंचित हो जाये और अंग्रेज अपना राज्य कारोबार अच्छी रीति चला सकें। इस प्रकार समाज में कानून व्यवस्था, दंड व्यवस्था का उद्‌भव हुआ। कहाँ सतयुग का स्वर्णकाल और कहाँ कलियुग का तमोप्रधान आसुरी वृत्ति वाला समय। इस प्रकार समय की पहचान भी अच्छी रीति से करें तो हम शिवबाबा के ज्ञान को अच्छी तरह से समझ सकते हैं क्योंकि सतयुगी बातों को समझने के लिए सतोप्रधान बुद्धि चाहिए। तमोप्रधान बुद्धि सतयुगी नियमों, ईश्वरीय सिद्धांतों को नहीं जान सकती इसलिए शिवबाबा हमारी बुद्धि को सतोप्रधान बना रहे हैं। इस दृष्टिकोण से शिवबाबा के ज्ञान के संबंध में विचार सागर मंथन करें तो हमें शिवबाबा के ज्ञान की महानता समझ में आयेगी तभी हम उसे प्राप्त कर सकेंगे। ❖

मेरा प्रीति-पात्र शिव

ब्रह्माकुमारी नर्मदा, मुंबई (बोरिवली)

सन् 1951 में शादी के बाद जब दुख के पहाड़ गिरने लगे तब मैं अपना एक नि:स्वार्थ प्रीति-पात्र ढूँढ़ रही थी। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सन् 1967 में जहाँगीर आर्ट गैलरी में लगी आध्यात्मिक चित्र-प्रदर्शनी का ज्ञान समझकर परमपिता परमात्मा शिव से संबंध जुट गया। यह मुंबई में ब्रह्माकुमारीज़ की पहली बड़ी प्रदर्शनी आयोजित हुई थी। पहले चित्र में परमात्मा का परिचय देखते ही मन हर्षा उठा, देहभान भूलने लगी, अशरीरीपन आ गया, ज्योतिबिन्दु परमात्मा के साथ एकत्व का अनुभव करने लगी। लगने लगा जैसे कि परमात्मा के संग का रंग लग रहा है। उनकी शक्ति की किरणें करंट की तरह महसूस होने लगी। परिचय सुना तो दिल ने कहा, यही है तेरा साथ निभाने वाला प्रीति-पात्र। वह इस जन्मभर तो साथ निभायेगा ही, देह-त्याग के बाद परमधाम भी साथ ले जायेगा। बुद्धि ने कहा, कितनी भाग्यशाली हो तुम जो ऐसा साथी मिला। मन ने मान लिया, हाँ, मुझे मेरा प्रीति-पात्र मिल गया।

एक दिन एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में बैठे-बैठे अपने प्रीतिपात्र शिवबाबा से बातें कर रही थी, मेरे प्रिय साथी, आपकी सखी आपको बुला रही है, आकर मिलो। अगर आप मेरे पास नहीं आ सकते तो मुझे अपने पास खींच लो। आप बार-बार अपनी तरफ आकर्षित कर रहे हो। मैं इस समय आपका साथ चाहती हूँ, आपके पास रहना चाहती हूँ, मेरे मीत आओ ना..। **तभी महसूस हुआ और दिव्य नेत्र से देखा भी, एक तेज ज्योतिर्मय बिन्दु सितारा परमधाम से नीचे उतर रहा है और मैं आत्मा बिन्दु भी देह से अलग होकर ऊपर की तरफ उड़ रही हूँ। फिर मुझ बिन्दु और परम ज्योतिर्मय बिन्दु के मिलन का अलौकिक आनंद अनुभव होने लगा। अचानक मिलन होते-होते तेज किरणें झरने की तरह परमात्म बिन्दु से निकल-निकल विश्व में चारों ओर बहने लगी,** सृष्टि के गोले के ऊपर गिरने लगी। विचार उठा, शायद यही है परमात्म बम जो आत्माओं को सच्ची शान्ति का अनुभव करा रहा है। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

जून अंक में सभी लेख पहले से अंत तक बहुत-बहुत अच्छे थे। 'संजय की कलम से' 'तपश्चर्या का फल' लेख में 'हमारा चेहरा ही हमारा विजिटिंग कार्ड हो, चेहरा ही परिचय दे', अच्छा है। संपादकीय 'कर्म और फल' पूरा का पूरा ही बहुत अच्छा है। अंत में लिखा है, 'कुल साढ़े छह सौ करोड़ आत्माओं ने कहाँ-कहाँ, क्या-क्या बीज बोया, कब बोया, कितना बोया, कितना पिछले जन्म में भोगकर आये, कितना कर्ज़ा लेकर आये, क्या हममें से कोई जानता है? तो नाहक क्यों, क्या में हम क्यों उलझें?' तथा बीच में 'संसार के करोड़ों लोग कार्य में तो लगे हैं पर किसी को क्या पता कि वे किस मनोवृत्ति से कार्य कर रहे हैं' बहुत ही दिल को लगने वाले वाक्य हैं।

'एकाग्रता की शक्ति' लेख भी बहुत सुंदर है। 'बहुतकाल के अभ्यास से हमारा मनोबल बढ़ने लगता है।', 'मन में बल तब आ सकता है जब मन एकाग्र हो' एक-एक रत्न सीधे ही दिल में उतर गये। जानकी दादी ने मम्मा के बारे में जो लिखा, उससे बहुत अच्छी प्रेरणा मिली – 'मम्मा भगवती माँ है। वो कहती है, सदा संतुष्ट रहो, शांत रहो। एक-दो को प्यार से देखो।'

पर्यावरण दिवस पर लेख भी बहुत अच्छा है। 'इस नाराज़ प्रकृति को खुश किये बिना हमारा सुख से जीना संभव नहीं है। कैसे करें इसे खुश? राजयोग द्वारा।', 'हमारे शुद्ध संकल्पों के शुद्ध प्रकंपनों के बढ़ने से वातावरण स्वच्छ हो जाता है।' जगदीश भाई पर लिखे लेख से बहुत प्रेरणा मिली – 'एक तो आप लोग ज्ञान में लेट आये हो, मम्मा-बाबा को भी नहीं देखा और अभी भी टाइम वेस्ट करते हो। क्या लक्ष्य रखा है अपने जीवन का?' एकदम ही ठीक है।

रमेश भाई जी के लेख से हमें सरकार के नियमों की तथा धन कहाँ लगाना है, कहाँ नहीं लगाना है – यह महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। यह लेख पढ़कर मेरे पड़ोसी ज्ञानामृत के सदस्य बन गये।

– ब्रह्माकुमारी कुमुदिनी, संगमनेर

जून, 2011 के अंक में प्रकाशित लेख 'प्रकृति के ऋण की अदायगी' बहुत ही प्रशंसनीय एवं ज्ञानवर्धक है। इस लेख में आदिकाल से अभी तक का प्रकृति का जो उपकार हम पर बताया गया है, अवर्णनीय है। हम प्रकृति के प्रति कृतज्ञता जताने के बदले उसे उजाड़ने में लगे हैं इसलिए पर्यावरण दूषित हो रहा है। अभी भी यदि हम जागृत हो जायें तथा शिवबाबा से मन-बुद्धि को जोड़ लें, अपने विचारों को देवताई बना लें तथा राजयोग द्वारा प्रकृति को मनाएँ तो प्रकृति हम पर सुखों की वर्षा अवश्य करेगी। इसी अंक में प्रकाशित लेख 'देवी सरस्वती का वरदान कैसे मिले?' बहुत ही सटीक है। इसमें देवी के अलंकारों की व्याख्या विस्तृत रूप से की गई है। ऐसे ज्ञानवर्द्धक ईश्वरीय विचारों का प्रसारण यदि भारत के सभी विद्यालयों में हो जाये तो आज के विद्यार्थी कल के कर्मशील, जागृत तथा बुद्धिमान नागरिक अवश्य बनेंगे।

– मालिनी शर्मा, इन्दौर

जून, 2011 अंक में मम्मा के बारे में बहुत अच्छे लेख पढ़ने को मिले। दादी गुलज़ार द्वारा लिखित लेख 'एकाग्रता की शक्ति' बहुत अच्छा लगा। मनोबल को बढ़ाने के लिए एक तो एकाग्रता चाहिए, दूसरा, कंट्रोलिंग पावर। मम्मा कहती थी, हर घड़ी अपनी अंतिम घड़ी समझो। मम्मा बहुत रॉयल थी। मम्मा शांत, गंभीर, मधुर और एकरस थी। उनके चेहरे पर सदा मुसकान, निश्चिन्तता, धैर्य और बाबा पर अचल-अटल विश्वास छलकता था। दादी जानकी द्वारा लेख 'स्थिरता सीखी मम्मा से' बहुत प्रिय लगा। लेखक और संपादक को साधुवाद!

– ब्रह्माकुमार प्रवेश, गोवर्धन (मथुरा)

महाविनाश कब और कैसे होगा?

● ब्रह्माकुमार विनायक, आबू पर्वत

आजकल सृष्टि के विनाश की चर्चा चारों ओर खूब फैली हुई है। कोई कहता है कि ज़मीन को पानी हप कर लेगा, पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति नष्ट होकर हम अंतरिक्ष में उड़ जायेंगे, भूकंप में शहर-गाँव आदि ज़मीन के भीतर चले जायेंगे आदि-आदि। ज़रा सोचिए, भले ही धरती पानी में डूब जाए, समंदर से पहाड़ उठ आएँ, धरती ऊपर और आसमान नीचे हो जाये, कुछ भी हो जाये लेकिन इन सब महादुर्घटनाओं का अंतिम परिणाम क्या है? वह है मानव की मृत्यु। परंतु, सोचने की बात है, इस जगत में जिसने भी जन्म लिया है उन सबके लिए मृत्यु अनिवार्य है। अगर विनाश न भी हो तो भी यह सिद्ध है कि कारणे-अकारणे या आयु पूरी होने से, हर एक को मृत्यु को पाना ही है। फिर मृत्यु लाने वाले विनाश का इतना भय, प्रचार, उसको इतना महत्त्व क्यों?

दूसरी बात है, मानव जीवन दो चीज़ों पर आधारित है – आत्मा और शरीर। दोनों में से विनाश किसका होगा? ऊर्जा और तत्व को न सृजित किया जा सकता है, न ही नष्ट। वे एक रूप से दूसरे में रूपांतर होते रहते हैं। आपने देखा होगा, बड़े-बड़े रसोईघरों में इस्तेमाल करके पुराने होने के बाद बर्तनों को तोड़-फोड़ कर फिर से लोहारखाने में भेज देते हैं। कारखानों में भी यांत्रिक पुर्जे आदि तैयार करने के बाद बची हुई धातु कबाड़खाने में चली जाती है। क्या इसका अर्थ उन चीज़ों का विनाश हो गया? नहीं! पुरानी वस्तु का पुनर्निर्माण हो जाता है अर्थात् उन्हों को भट्ठी में पिघलाकर नई वस्तु तैयार करते हैं। वैसे ही, जब यह शरीर वृद्धावस्था को पा लेता है या आत्मा को कर्मेन्द्रियों से काम लेना असंभव हो जाता है तब आत्मा शरीर का त्याग कर देती है। शरीर पंचतत्वों में बदल जाता है और आत्मा पंच तत्वों से बने नये शरीर में प्रवेश हो जाती है। तो यहाँ विनाश की बात ही नहीं रही, यह तो सिर्फ रूप परिवर्तन की एक नैसर्गिक प्रक्रिया है।

इसी प्रकार, यह सृष्टि भी पांच हज़ार वर्षों से युग बदलते-बदलते अब तमोप्रधान अवस्था तक पहुँच चुकी है। जैसे पुराने मकान में खिटपिट होती है तो सुख-शान्ति से जीने के लिए उसे तोड़कर नया बनाना ही पड़ेगा। वैसे ही दुख-अशांति भरा यह कलियुग भी अब समाप्त होकर, सुख-शान्ति भरा सतयुग आयेगा जिसमें हम सर्वगुण संपन्न, सोलह कला संपूर्ण, संपूर्ण निर्विकारी, अहिंसा परमोधर्मी और मर्यादा पुरुषोत्तम रहेंगे। तो क्या आप इसको महाविनाश कहेंगे? यह तो सचमुच महाकल्याण है।

इसलिए प्राकृतिक रूपांतरण की चिंता छोड़कर जो वास्तविक विनाश है, इसको समझना बहुत ज़रूरी है।

वास्तविक विनाश क्या है?

विनाश की परिभाषा यह है कि वस्तु का नाश होने के बाद फिर से उसका सृजन न हो। सृष्टि नाटक के अविनाशी नियम अनुसार यह नाटक हर पाँच हज़ार वर्ष के बाद हूबहू पुनरावृत्त होता है। **अगर इस कल्प में हमने पुरुषार्थ पर ध्यान नहीं दिया, विकारों के वश होकर गफलत करते रहे, भगवान की श्रीमत को सुना-अनसुना कर दिया, स्वयं पर नज़र रखकर संस्कारों को परिवर्तन करने के बजाय औरों की कमी-कमजोरी ही देखते रहे, व्यर्थ संकल्प-बोल-कर्म में ही समय गंवाते रहे और इन सब कारणों से पुरुषार्थ में सफलता नहीं पाई, बाप समान बनने के लक्ष्य से वंचित रह गए, भविष्य में श्रेष्ठ पद के बदले नीच पद ग्रहण करना पड़ा तो..तो..हे आत्मायें सुन लो..सृष्टि के हूबहू पुनरावर्तन के कारण इस कल्प की यह असफलता या हार भी हूबहू पुनरावृत्त होती रहेगी अर्थात् यह हार सिर्फ एक कल्प के लिए नहीं**

बल्कि कल्प-कल्पांतर के लिए स्थायी हो जायेगी। यह अपरिवर्तनीय असफलता ही उस आत्मा के लिए महाविनाश है क्योंकि इस हार को भविष्य में आने वाले कल्पों में सफलता या जीत में परिवर्तन करना असंभव है।

भगवान को पहचानकर, उनकी संतान बनकर, उनको अपना जीवन देकर, श्रेष्ठ बनने की युक्ति उनसे सीखकर, सृष्टि नाटक में अपने पात्र को भगवान के समान बनाने की शुभ आश दिल में रखकर भी, कमज़ोरियों को न जीतने के कारण अगर संपूर्ण नहीं बन सके और अंतिम घड़ी 'मेरी भूमिका सार्थक हो गई' इस धन्यता भरे संकल्प के बदले 'हाय-हाय यह मैंने क्या किया, क्या पाया, इस सृष्टि में मेरी भूमिका ही व्यर्थ हो गई' इस पश्चाताप में जलते हुए अंतिम श्वास छोड़ना पड़ा तो क्या वह घड़ी उस पुरुषार्थी आत्मा के लिए महाविनाश की घड़ी नहीं है? आप ही बताइए।

यह विनाश कैसे शुरू होगा?

जैसे पहाड़ी इलाकों में वाहन चलाते वक्त, आरंभ से लेकर शिखर पर पहुँचने तक भी मार्ग के एक तरफ घाटी रहती है इसलिए चालक का मन-बुद्धि और शरीर, तीनों का संपूर्ण ध्यान मार्ग पर रहना चाहिए, तब ही वह निशान पर पहुँच सकता है। अगर ज़रा भी असावधानी हुई तो वाहन पाताल पहुंचकर चकनाचूर हो जायेगा। वैसे ही आध्यात्मिक साधना का मार्ग भी है। शिवपिता के समान बनने के श्रेष्ठ लक्ष्य तक ले जाने वाले इस मार्ग पर अगर हम मन-बुद्धि या कर्मेन्द्रियों की चंचलता के वश हुए तो हमारा विनाश की ओर जाना निश्चित है। **इसलिए, जब-जब हमारे मन-बुद्धि, बेहद के वैराग वृत्ति की धारणा के बजाय व्यक्ति-वस्तु-वैभव की तरफ झुकते हैं, विकारी या व्यर्थ की तरफ आकर्षित होते हैं, आँखें विनाशी सौंदर्य में या मनोरंजक साधनों में लिप्त हो जाती हैं, श्वास शिवपिता की स्मृति के बगैर व्यर्थ जा रहा है, तब-तब समझना चाहिए कि यह घड़ी मुझ आत्मा की सच्ची कमाई के महाविनाश की घड़ी है जो कल्प-कल्पांतर के लिए स्थिर हो रही है।**

क्या इस विनाश को रोक सकते हैं?

निस्संशय! इसको रोकने के लिए चाहिएँ तीन दृढ़ प्रतिज्ञाएँ-

पहली – आज से ही मैं भगवान की दी हुई श्रीमत, जो श्रेष्ठ मंज़िल पाने का आधार है, के अनुसार ही हर कदम उठाकर जीवन की हर घड़ी को सफल करूँगा।

दूसरी – मैं जीवन-यात्रा में मन-बुद्धि और कर्मेन्द्रियों को पुरुषार्थ के मार्ग पर एकाग्र कर, चंचलता को संपूर्ण समाप्त करूँगा।

तीसरी – इन प्रतिज्ञाओं का अंतिम श्वास तक पालन कर, माया और प्रकृति पर विजय पाकर बाप समान अवस्था तक पहुँचकर ही दिखाऊँगा।

प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करने के लिए चाहिए थोड़ा-सा धैर्य और साहस। चिंता करने की जरूरत ही नहीं क्योंकि हमारा साथी है स्वयं सर्वशक्तिमान भगवान शिवपिता।

मैं कौन हूँ?

ब्रह्माकुमार खुशीराम साहनी, शान्तिवन

मैं नहीं जानता था कि मैं कौन हूँ। कभी यह सोचता था कि मैं कुछ नहीं हूँ और कभी यह सोचता था कि मैं सब कुछ हूँ। यह उलझन दूर तब हुई जब निराकार परमात्मा शिव की रूहानी पढ़ाई पढ़ने से यह पता चला कि पाँच तत्वों की बनी हुई देह से न्यारी मैं एक अति सूक्ष्म चेतन सत्ता ज्योतिबिन्दु अविनाशी आत्मा हूँ और इस देह की भृकुटी में बैठी हुई देह की चालक और मालिक हूँ फिर यह भी पता चला कि वर्तमान समय परमात्मा शिव नई स्वर्ग की दुनिया की पुन: स्थापना कर रहे हैं और उनके इस स्थापना के कर्त्तव्य में मैं भी एक उपकरण हूँ और भविष्य में इसी स्वर्ग का होवनहार देवता हूँ। अपनी ऐसी सुन्दर पहचान पाकर मैं तो खुशी के झूले में झूलने ही लगा।

भूख – शान्ति की या रोटी की

● ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

एक बहुत बड़ा सवाल है कि शान्ति कहाँ हैं? न तो यह पेड़ों पर लगती है, न खदानों से निकलती है और न ही आसमान से बरसती है तो फिर यह है कहाँ? सरकारें आँकड़ें निकालती हैं कि गरीबी रेखा से नीचे के लोग 30 प्रतिशत हैं या 40 प्रतिशत हैं या जितने भी हैं पर अहम सवाल है कि शान्ति की रेखा से नीचे के लोग कितने हैं? रोटी के भूखे ज्यादा हैं या शान्ति के भूखे ज्यादा हैं? ज्यादा आत्महत्यायें और हत्यायें शान्ति की भूख करवाती है या रोटी की? हर व्यक्ति को रोटी मिले, इसके लिए तो बहुत योजनायें हैं परंतु हर व्यक्ति को शान्ति मिले, क्या इसके लिए भी कोई योजना बनी है? पेट भरने मात्र से शान्ति मिल जाती तो आज भरे पेट वाले चैन की नींद सोते पर केवल पेट भरना ही जीवन नहीं है, मन भी शान्ति से भरपूर हो, यही सच्चा जीवन है।

हम सभी शान्ति चाहते हैं, यह चाहना ही बताती है कि कभी हमने शान्ति का अनुभव किया है। चाहना उसी चीज़ की होती है जो पहले हमारे पास थी, हमें सुकून देती थी पर बाद में उसका अभाव हो गया या वह हमसे खो गई या चुरा ली गई।

चुराने वाले पर शक जहाँ-जहाँ होता है, वहाँ-वहाँ हम उसे खोजने जाते हैं। अक्सर शान्ति मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारों आदि धार्मिक स्थानों पर या जंगलों और एकान्त स्थानों पर खोजी जाती है परंतु विश्वास नहीं होता कि इन स्थानों ने या इनमें रहने वाले लोगों ने हमारी शान्ति को चुराया होगा या हम ग़लती से वहाँ रख आए होंगे या भूल आये होंगे।

बचपन था शान्ति से भरपूर

उम्र बढ़ने के साथ-साथ जीवन की शान्ति आमतौर पर घटती जाती है। इसलिए कई लोग बचपन के निश्चिन्त दिनों को याद करते हैं। जब हम बच्चे थे, अपने साथ कुछ नहीं लाये थे। हमें बना-बनाया मकान मिला, जीवन के सब साधन तैयार मिले पर हमारी मुट्ठियाँ बंद थीं। अवश्य हम अपनी मुट्ठियों में बंद रेखाओं में कुछ अमूर्त चीज़ें साथ लाये थे। इनमें से एक थी शान्ति। उस समय हम शान्ति से भरपूर थे।

अपना बचपन यदि भूल गया हो तो हम आज के 6-8 मास के बच्चे की तस्वीर अपने सामने लाकर, बचपन की शान्ति का अहसास कर सकते हैं। आंगन में 6-8 मास का बच्चा पालने में झूल रहा है, हाथ-पांव मार-मार कर खेल रहा है, बेहद खुशी में किलकारियाँ मार रहा है। बच्चे की यह खुशी किसी भौतिक नाम, मान, शान, पद, पैसे से उपजी हुई नहीं है, यह आंतरिक खुशी है जो भीतर से बाहर आ रही है। झुग्गी का बच्चा हो या महल का – दोनों का इस निर्दोष खुशी पर समान अधिकार है।

बड़े हुए तो बन गए शान्ति के भिखारी

तभी बाहर से बच्चे का एक संबंधी क्रोध में तिलमिलाता हुआ अंदर प्रवेश हुआ। उसके पास न शान्ति है, न खुशी मानो आग का अंगारा है और सबको भस्म करने के इरादे से पाँव पटक रहा है। सारा घर सहम गया पर बच्चा बेपरवाह है, उसकी शान्ति, खुशी का झरना निर्बाध है। वह बच्चे के पालने की तरफ ज्योंही गया मानो अंगारे पर बर्फ गिर गई और अपने क्रोध को, अशान्ति को भूल बच्चे से खेलने लगा, मुसकराने लगा। **जो काम बड़े-बड़े न कर सके, वह काम एक निर्बल बच्चे की निर्मल मुसकान ने कर दिया। बच्चे के पास न शारीरिक बल है, न धन का बल, न पद का बल है, न पढ़ाई का। है तो बस शान्ति और निर्मलता का बल जो अशान्त व्यक्ति पर इतना भारी पड़ा कि वह शांत हो गया।** ऐसी शान्ति, ऐसी खुशी हमारी मुट्ठी से कब बाहर फिसल गई, हमें पता ही नहीं पड़ा और ज्यों-ज्यों बड़े हुए, शान्ति के भिखारी बन, शान्ति खोजने और मांगने लगे।

भगवान कहते हैं, जितना छोटा बच्चा, उतना कर्मातीत। बच्चे को महात्मा भी कहा जाता है क्योंकि उसमें देह का अभिमान नहीं होता। जाति, कुल, धर्म, धन का नशा नहीं होता। ज्यों-ज्यों बड़ा हुआ, देह-अभिमान बढ़ा तो शान्ति घटती गई।

हम बड़े लोग मंदिर में जाकर भगवान से दो पल की शान्ति मांगते हैं। भगवान कहते हैं, जो पहले दी थी वो कहाँ गई? हम कहते हैं, वो तो खो गई। भगवान कहते हैं, जो पहले दी थी वो खो गई तो क्या गारंटी है कि अब जो दूंगा, वह नहीं खोयेगी। चीज़ को मांगने से अच्छा है उसको संभालकर रखना। संभालकर नहीं रखेंगे तो फिर-फिर मांगनी पड़ेगी। फिर-फिर मांगने का यह व्यापार सर्वत्र चल रहा है।

विस्मृत हो गई शान्ति

शान्ति को हमने संभाला नहीं, उसकी परवाह नहीं की। हम उसे रखकर भूल गए। मान लीजिए, हम किसी समारोह में गये और वहीं कुर्सी पर घर की चाबी भूल आए। वापस लौटे तो घर का ताला खोलने के लिए जेब में हाथ डाला पर चाबी तो मिली नहीं। मुख से निकला, आज तो चाबी खो गई। सवाल यह है कि चाबी खोई या हमारी स्मृति खोई? चाबी तो बड़ी आज्ञाकारी है, हमने अपने हाथ से जहाँ रखी थी, वहीं रखी है, वह तो वहाँ से इंच भर भी नहीं हिली। अब जब तक हमें यह याद न आये कि वह कुर्सी पर रखी है, हम चाहे उसे तीनों लोकों में खोज लें, वह नहीं मिलेगी। हम खोजते-खोजते कइयों पर शक करेंगे कि इसने ली होगी और कइयों पर उंगली उठायेंगे कि वह चाबी खोने का कारण है पर असली कारण तो हमारी विस्मृति है।

शान्ति का अनुभव भीतर उतरकर करें

यही बात शान्ति पर भी लागू होती है। आत्मा परमधाम से अपने साथ शान्ति लेकर आई थी। आत्मा का धर्म ही है शान्ति, वह शान्तिधाम की रहवासी है और फिर शान्ति के सागर की संतान है। जैसे राजा के बच्चे के पास बेशुमार हीरे-जवाहरात होते हैं, ऐसे ही शान्ति के सागर की संतान हम आत्माओं के पास भी बेशुमार शान्ति थी। **इस शान्ति का अनुभव तभी हो सकता है जब आत्मा आत्मस्थ हो, स्वरूपस्थ हो, स्वयं के अंदर मौजूद शान्ति का अनुभव स्वयं के भीतर उतरकर करे।** शान्ति आत्मा की अपनी चीज़ है। इस सत्य को भूल जाने के कारण आज हम शान्ति को समस्त भौतिक साधनों में, चकाचौंध और विलासिता की चीज़ों में खोज रहे हैं परंतु शान्ति के करीब जाने के बजाय उससे दूर होते जा रहे हैं।

जब शान्ति नहीं मिलती तो दूसरों पर उंगली भी उठती है कि यह व्यक्ति, यह परिस्थिति मेरी अशान्ति का कारण है पर असल में तो अशान्ति का कारण है हमारी विस्मृति। स्वयं को जानकर ही हम स्वयं में समाहित शान्ति को पहचान सकते हैं। **जैसे कस्तूरी मृग की नाभी में होती है पर यदि मृग की ही पहचान न हो तो कस्तूरी कैसे मिलेगी? इसी प्रकार आत्मा की ही पहचान न हो तो शान्ति तक पहुँच बनेगी कैसे?**

आत्मा, आध्यात्मिक ऊर्जा है

आत्मा इस शरीर को चलाने वाली एक चेतन शक्ति है। जैसे बिजली के उपकरणों में विद्यमान अदृश्य करंट उन्हें संचालित करता है इसी प्रकार शरीर भी एक उपकरण है, इसका संचालन भी आध्यात्मिक ऊर्जा आत्मा करती है। जैसे ऊर्जा का कनेक्शन कट हो जाने पर उपकरण नहीं चलता, इसी प्रकार शरीर से इस आध्यात्मिक ऊर्जा का कनेक्शन कट हो जाने पर शरीर भी नहीं चलता। इस ऊर्जा का प्रतिस्थापन किसी भौतिक शक्ति से नहीं हो सकता। यह आध्यात्मिक ऊर्जा अर्थात् आत्मा, प्रकाश का अति सूक्ष्म कण है। यह चेतन कण भ्रकुटि के मध्य हाइपोथेलामस के बिल्कुल करीब विराजमान है और अपनी सूक्ष्म शक्तियों – मन, बुद्धि, संस्कार द्वारा शरीर और इसकी समस्त स्थूल इंद्रियों को नियंत्रित करती है।

आत्मा मुसाफिर है। जैसे कोई मुसाफिर एक मकान या सराय या

शहर छोड़ दूसरे में जाता है इसी प्रकार आत्मा भी 84 जन्मों में 84 शरीर रूपी मकान बदलती रहती है। जब आत्मा सतोप्रधान होती है तो सृष्टि, प्रकृति, शरीर सभी सतोप्रधान मिलते हैं पर जैसे-जैसे आत्मा की शक्ति क्षीण होती जाती है, ये तीनों चीज़ें तमोप्रधान बन जाती हैं जैसेकि वर्तमान समय बनी हुई हैं।

शान्ति की ग्लानि ही धर्मग्लानि है

आत्मा सतोप्रधान से तमोप्रधान की यात्रा तो स्वत: पूरी कर लेती है परंतु सतोप्रधान बनने के लिए उसे ईश्वर पिता के मार्गदर्शन और ज्ञान की ज़रूरत पड़ती है। इसी ज़रूरत को पूरा करने के लिए भगवान को धरती पर आना पड़ता है। **आत्मा के तमोप्रधान बनने को ही धर्म की ग्लानि कहते हैं क्योंकि आत्मा के सच्चे धर्म – शान्ति की ग्लानि अर्थात् समाप्ति हो जाती है। इस शान्ति रूपी धर्म के लिए ही फिर चीख-पुकार मच जाती है। भगवान कहते हैं, शान्ति आपके पास ही है। अपने भीतर उतरिए, वहाँ जहाँ आप आत्मा के बैठने की जगह है।** इस जगह पर अर्थात् भ्रकुटि सिंहासन पर बैठकर सारा कारोबार चलाइये तो कार्य भी हो जायेगा और शान्ति भी बनी रहेगी। भ्रकुटि सिंहासन से उतर जाते हैं तो आत्मा की नियंत्रण करने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

(क्रमशः)

शुभ भावना के चमत्कार

शुभ भावनाओं से मिलती है, कर्मों में सफलता अपार
शुभ भावनायें बढ़ाती हैं, जीवन में स्नेह और प्यार।

शुभ भावनाओं से करो, हर दिल का तुम सत्कार,
शुभ भावनायें मिटाती हैं, हर मन के अशुद्ध विचार।

शुभ भावनाओं से बनेगा, मनभावन स्वर्ग ये संसार,
शुभ भावनायें ही बनाती हैं, विश्व को प्यारा परिवार।

शुभ भावनायें ही बनती, आत्मिक दृष्टि-वृत्ति का आधार,
शुभ भावनायें ही पहनवती हैं, अनेकों से दुआओं के हार।

शुभ भावनायें अनुभव कराती, मानवीय जीवन जीने में सार,
शुभ भावनायें ही करायेंगी, अनेकों को दिव्य साक्षात्कार।

शुभ भावनायें कर देती हैं, देह का खत्म अहंकार,
शुभ भावनाओं से असुर भी, डाल देंगे हथियार।

शुभ भावना से बन जाता है सात्विक-शुद्ध-पवित्र आहार
जिससे ही मिट जाते हैं, तन के मन के रोग हज़ार।

शुभ भावनायें कराती हैं, धारण सतयुगी अलंकार,
शुभ भावनायें ही बनाती हैं, फरिश्ता सो ज्योति निराकार।

शुभ भावना के बल से, प्रकृति भी जाती बलिहार,
शुभ भावना से होगा, विश्व में भारत का नामाचार।

ब्रह्माकुमार शिवकुमार,
शान्तिवन (बी.के.कालोनी)

आठवाँ आश्चर्य

● ब्रह्माकुमारी शकुंतला, ढिगावा मण्डी

भ गवान जब धरा पर अवतरित होते हैं तो संपूर्ण पवित्रता सिखाते हैं। सारी दुनिया में यह ईश्वरीय विश्व विद्यालय इसी बात में प्रसिद्ध है कि यहाँ आने वाले हर वर्ग और हर उम्र के लोग ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करते हैं। कुमार-कुमारी जीवन तो स्वत: ही पवित्र जीवन है। यज्ञ के आदि से ही ईश्वरीय कार्य की प्रसिद्धि के निमित्त तो अधिकतर युगल ही बने। गृहस्थ व्यवहार में रहने वाले युवा पति-पत्नी जब ब्रह्मचर्य अपनाने लगे तभी बवाल मचा था।

कलियुग के विकारी वातावरण में रहते हुए भी अपने को कमल समान, अपवित्रता की कीच से अछूता रखने वाली हर आत्मा महावीर है फिर चाहे वे बाल ब्रह्मचारी कुमार-कुमारियाँ हैं, चाहे घर-गृहस्थ में रहने वाले युगलमूर्त, तो हे महावीर आत्माओ! तुम्हें यह नशा होना चाहिए कि पवित्रता रूपी अमोघ शस्त्र प्रदान करने के लिए भगवान ने हमें ही चुना। हम ही वे महावीर आत्मायें हैं जिन पर स्वयं भगवान ने यह विश्वास रखा कि ये आत्मायें पवित्रता रूपी सीता की रक्षा कर सकती हैं।

कुछ वर्ष पहले जब भारत में अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति बिल क्लिंटन का आगमन हुआ था तो मीडिया द्वारा उन्हें दुनिया का सबसे शक्तिशाली व्यक्ति संबोधित किया गया था लेकिन दुनिया का सबसे शक्तिशाली व्यक्ति वही है जिसने संसार में रहते हुए ब्रह्मचर्य को अपनाया है और अब वह समय भी दूर नहीं है जब दुनिया उसकी इस शक्ति का लोहा मानेगी, ऐसे शक्तिशाली व्यक्तियों की शिव बाबा के पास पूरी सेना है।

भगवान की गिनीज बुक में नाम

इस दुनिया में मनुष्य चाहते हैं कि हम कोई ऐसा अद्‌भुत कार्य करें जो हमारा नाम गिनीज बुक में आ जाये। अद्‌भुत में अद्‌भुत कारनामा यही है कि जहाँ चारों तरफ काम विकार का नाला बह रहा हो, कोई उससे अछूता रह जाए। ईश्वरीय विश्व विद्यालय तो ऐसे अद्‌भुत कारनामे करने वालों से भरा पड़ा है। ये सभी उसमें नाम डाल देने के सुपात्र हैं। अब उसमें नाम हो या ना हो पर भगवान की गिनीज बुक में तो दर्ज हो ही गया है।

पवित्रता ही राम नाम की मुँदरी है

लोग कहते हैं, क्या सबूत है आपके पास कि आपको भगवान पढ़ाते हैं? भगवान की दी हुई यह अनमोल पवित्रता ही सबूत है। पवित्रता, शोक वाटिका में बैठी, रावण की दासियों से घिरी सीताओं के लिए हनुमान द्वारा गोद में गिराई गई राम नाम की मुँदरी (अंगूठी) ही तो है जिसको देखकर सीता को यह निश्चय हो गया था कि यह मुँदरी मेरे राम की ही है और इसको लाने वाला राम का ही दूत है।

प्रवृत्ति में रहते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों ने तो इस गलत धारणा को निर्मूल कर दिया है कि आग और कपूस दोनों इकट्ठे नहीं रह सकते और संसार का आठवां आश्चर्य प्रैक्टिकल कर दिखाया है। अब वह दिन दूर नहीं जब स्त्री को साधना में बाधक समझने वाली आत्मायें इस अकाट्य सत्य को स्वीकार करेंगी और पवित्र प्रवृत्ति की जय-जयकार इस धरा धाम पर गूंजने लगेगी।

लेकिन सावधान!

लेकिन यदि तुमने पवित्रता के व्रत को तोड़ा तो तुम्हारे से बड़ा धोखेबाज भी इस दुनिया में कोई नहीं क्योंकि तुमने अपने को, दैवी परिवार को, सारे संसार को धोखा दिया और सबसे बड़ी बात स्वयं भगवान को धोखा दिया। यदि पवित्रता का पालन करने में अलबेले बने तो यह प्रकृति भी तुम्हें कभी माफ नहीं करेगी। द्वापर युग

के प्रारंभ में ही दैवी सभ्यता व संस्कृति के प्राय: लुप्त होने का कारण प्रकृति का आक्रोश ही तो था और इस आक्रोश का कारण दैवी आत्माओं का पवित्रता से विमुख होना ही तो था।

अपवित्रता लीकेज है

आप कितना भी योग व सेवा के द्वारा कमाई जमा कर रहे हों लेकिन सूक्ष्म में भी अपवित्रता है तो यह आपकी जमा शक्तियों के खजाने में बड़ी भारी लीकेज है। इसलिए ध्यान रहे कि यदि किसी समय याद व सेवा के द्वारा कमाई जमा करने में असमर्थ महसूस करें तो कम से कम लीकेज तो न होने दें। इसलिए आज तक जो बीता सो बीता। आज से ही हम यह ठान लें कि हमें पास विद ऑनर बनना ही है।

प्यारे बापदादा ने भी समय का गंभीर इशारा देते हुए सावधान किया है कि अब 'लेकिन' शब्द को समाप्त करो। भगवान ने यह आर्डिनेन्स निकाला है कि बहुत काल से मन-वचन-कर्म से पवित्रता का व्रत पालन करने वाली आत्मायें ही मुझसे मिलन मना सकेंगी, नहीं तो सम्मुख बैठने का भी अधिकार नहीं मिलेगा, उससे पहले ही हम अपने को बेदाग डायमण्ड बना लें। अभी भी जो चाहे सो कर सकते हैं। भगवान ने जो लास्ट चांस दिया है, उसका भरपूर लाभ उठा लेना है। ❖

तेरा आभार

ब्रह्माकुमार पंकज, इटावा

जहाँ शब्द कह दे, बस बस बस मौन रहो, अब कुछ न कहो,
जहाँ तर्क कह दे, बस बस बस गहरे डूबो और बहो।
जहाँ चेतना कह दे, बस बस मैंने सब कुछ पाया,
ऐसा तेरा प्यार कि जीवन तुझको पा इतराया।।

तेरे एक शब्द की महिमा वाणी कैसे गाये,
तेरी मीठी दृष्टि का, दृष्टि क्या मोल चुकाये।
जैसे पंछी गगन नाप कर फिर-फिर तुझ पर आए,
मेरे बाबा, मेरे बाबा कह-कह तुझे बुलाए।।
तब श्वासों-श्वासों को बाबा तूने ही महकाया,
ऐसा तेरा प्यार कि जीवन तुझको पा इतराया।।

इन श्वासों को जब से बाबा तेरा जादू लागा,
घर, आंगन, चौका, चूल्हे का अहो भाग्य है जागा।
चलना-फिरना-कहना-सुनना सब कुछ लगता प्यारा,
लगता जैसे श्वासों को आ तूने स्वयं संवारा।।
हर उमंग में, हर तरंग में तू ही आन समाया,
ऐसा तेरा प्यार कि जीवन तुझको पा इतराया।।

मेरी मन वीणा को बाबा तेरी ममता, तेरा प्यार,
करता रहता नित्य तरंगित बन कर स्पंदन साकार।
और गूंजता रहता बाबा रोम, रोम तेरा आभार,
पुलकित और तरंगित मन का बाबा तुम करते शृंगार।।
तन की कुटिया, मन का आँगन तूने ही महकाया,
ऐसा तेरा प्यार कि जीवन तुझको पा इतराया।।

प्रेम सागर ने छलकाया भरपूर प्यार

● ब्रह्माकुमार वी.के.सक्सेना, मण्डावली, दिल्ली

बात उन दिनों की है जब मैं इफको (IFFCO) बरेली में जनरल मैनेजर के पद पर आसीन था। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की बहनों ने बरेली टाउनशिप में आध्यात्मिक चित्रों की प्रदर्शनी लगाई और उसका उद्घाटन मेरे द्वारा कराया। संस्था का तथा परमात्मा शिव का परिचय भी मुझे दिया परंतु मन में यही भावना रही कि जैसे और धर्मों की संस्थायें हैं वैसे ही यह भी एक संस्था है और बात आई-गई हो गई।

मैं अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ बेहद सुख-सुविधा संपन्न जीवन व्यतीत कर रहा था। क्लब, पार्टी, शराब, सिगरेट आदि गंदी आदतें मेरे जीवन के हिस्से थे और दीपावली के अवसर पर हम सब जुआ भी खूब खेलते थे। हाँ, इतना अवश्य था कि मैं एक कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदार अधिकारी के रूप में विख्यात था। शनैः शनैः समय बीतता गया, सेवानिवृत्त हो मैं दिल्ली आ गया। दिल का दौरा पड़ने के कारण पत्नी ने जल्दी ही देह त्याग कर दी और मैं स्वयं को बेहद अकेला तथा दुख के सैलाब में डूबा हुआ महसूस करने लगा। कहावत है, जब जीने के सारे दरवाज़े बंद हो जाते हैं तो परमात्मा अपने दरवाज़े खोल देता है, मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ।

बाबा के प्यार की किरणों में डूबने लगा

एक दिन फिर मुझे प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में शिवबाबा का सत्य परिचय पाने का सौभाग्य मिला। मेरे अंदर बरेली में जो ज्ञान का बीज पड़ा था, वह पल्लवित होने लगा। शिवबाबा के प्रति मेरा खिंचाव बढ़ने लगा, जीवन शैली में परिवर्तन आ गया और मैं पहली बार माउण्ट आबू बाबा से मिलने गया। साइंस का विद्यार्थी और पेशे से भी इंजीनियर होने के कारण मैं वहाँ दादी के तन में बाबा के आगमन के बारे में ही ज्यादा चिंतन करता रहा और प्रथम मिलन में कोई विशेष अनुभव नहीं हुआ परंतु सन् 2000 में दूसरी बार बाबा से मिलने हर्ष व उल्लास के साथ पहुँचा। इस बार बाबा के प्रति पूर्ण निष्ठा मेरे अंदर समा चुकी थी। बाबा के आने के एक दिन पहले रात्रि में सूरज भाई की क्लास हुई जिसमें उन्होंने हिदायत दी कि कल जितना हो सके, मौन में रहना है। मैंने उस आज्ञा का पूरी तरह पालन किया। बाबा मिलन के लिए मैं डायमंड हाल के गेट नं. 13 के पास, ठीक स्क्रीन के सामने बैठकर बाबा को याद करने लगा और

जल्द ही उनके प्यार की किरणों में डूबने लगा। यह बात मैं इसलिए आपको बताना चाहता हूँ कि कई बार आगे-आगे बैठने की स्पर्धा में हम अपनी स्थिति नीचे कर लेते हैं। प्रभु-मिलन के लिए स्थिति बनाना आवश्यक है, न कि स्थान बनाना।

मेरा रोम-रोम गद्गद हो गया

हाँ, तो मैं आपको बता रहा था कि **बाबा की कशिश इतनी ज़्यादा बढ़ी कि मैं परमधाम पहुँच गया और बाबा से बोला, 'बाबा, मैं आपको लेने आया हूँ, आप मेरे पीछे-पीछे आना और मैं आगे-आगे चलूँगा।' इस रूहरिहान में कितना समय बीत गया, पता ही नहीं चला। मैं तो श्वेत किरणों के प्रकाश में जैसे गुम हो गया और मेरी तंद्रा तब टूटी जब बाबा गुलज़ार दादी जी के तन में प्रवेश कर गये।** मुझे सचमुच बेहद खुशी हुई कि बाबा मेरे साथ-साथ ही आये हैं और फिर मिलन मनाने के

लिए उन सुखद प्रकाश की किरणों में ऐसे डूब गया कि साढे चार घंटे कब बीत गये, पता ही नहीं चला। इधर-उधर के लोग खा-पी रहे थे, तालियाँ बजा रहे थे परंतु मेरी आँखों से लगातार अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी, जो किसी भी तरह रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। कोई मुझे इस तरह रोते हुए देख न ले इसलिए मैंने अपने सिर पर श्वेत शाल डाल लिया और जब बाबा के जाने का गीत बजाया गया तो मैंने बाबा से उसी धुन में रूहरिहान किया कि बाबा आप तो एक सेकंड में परमधाम चले जायेंगे और मैं डायमंड हाल में अकेला रह जाऊँगा। उसी क्षण मुझे लगा कि जैसे बाबा को मैं खींच रहा हूँ कि बाबा, अभी मत जाओ। अचानक मैंने स्क्रीन पर बाबा को एक बुजुर्ग बाप और अपने को एक छोटे बच्चे के रूप में उपस्थित देखा। बाबा मुझे बहुत प्यार से दृष्टि दे रहे थे और मैं तृप्त होता जा रहा था, प्यास बुझती जा रही थी। मैंने बाबा से कहा, अब आप जाइए। बाबा धीरे-धीरे दृष्टि देते हुए मुझसे विदा हो गये और मेरा रोम-रोम गद्‌गद हो गया। फरिश्ते की तरह इतना हल्का हो गया कि मैं जैसे उड़ने लगा, जिसका शब्दों में वर्णन कर पाना कठिन है।

प्रेम सागर का प्यार आँखों से छलक आया

मधुबन से विदाई लेकर मैं ट्रेन में आकर सो गया। बहुत थक गया था। स्वप्न में लगा जैसे कोई छोटा बच्चा मेरे पैर दबा रहा है और मेरी पूरी थकान दूर हो गई है। अपने को पूरी तरह ताज़गी से भरा हुआ महसूस करने लगा तभी मैं चौंककर उठ बैठा, इधर-उधर देखने लगा कि आखिर मैं हूँ कहाँ। दस मिनट बाद होश आया कि मैं ट्रेन से वापस दिल्ली जा रहा हूँ और मेरे आस-पास कोई छोटा बच्चा नहीं है। प्रेम सागर का इतना प्यार पाकर आँखों से फिर प्यार छलक आया।

आज मुझे ज्ञान में चलते 13 वर्ष बीत गये हैं परंतु सन् 2000 का यह प्यारा-सा अनुभव आज भी मुझे बाबा की सुनहरी यादों की खुशी से भरपूर कर देता है। दिल झूम-झूमकर यही गाता है, वाह, मेरे मीठे बाबा, वाह! ❖

पुरुष की कमज़ोरी नहीं, शक्ति बनो

निशा गेरा, नई दिल्ली

जब व्यक्ति आत्मिक स्वरूप से भटक जाता है तो वह देह से संबंधित चीज़ों में सुख ढूँढ़ने लगता है जो कि अल्पकाल का सुख देती हैं। आत्मा की असली भूख तो सच्चा प्यार है, जो सिर्फ भगवान से ही मिल सकता है, वही प्यार अविनाशी है। सामान्यतया कहा जाता है, Marriages are made in heaven. इसका मतलब यह नहीं है कि शादियाँ स्वर्ग में तय होती हैं बल्कि इसका अर्थ यह है शादी घर को ही स्वर्ग-तुल्य बनाने और स्वयं को दैवीगुण संपन्न देवी-देवता बनाने के लिए होती है। इसके लिए नारी को आत्म-बल से संपन्न होकर, पुरुष की कमज़ोरी बनने की बजाय उसकी शक्ति बनना होगा।

देह अभिमान के कारण नारी, पुरुष की कमज़ोरी बन गई है। अगर नारी पुरुष को देही-अभिमानी बनने में मदद करे तो यह बहुत बड़ी सेवा है। गृहस्थ व्यवहार में रहते हुए भी वह पति की ताकत बनकर उसे परमात्मा से जुड़ने में मदद कर सकती है। **कहते भी हैं कि पत्नी वही जो पति को धर्म के रास्ते पर ले जाये। शिवबाबा का कहना है कि नर-नारी गृहस्थ व्यवहार में लक्ष्मी-नारायण की तरह पवित्र रह सकते हैं।** ज़रूरत इस बात की है कि नर और नारी अपने आदि-अनादि स्वरूप को ईश्वरीय ज्ञान द्वारा पहचानें। शादी के बाद उन्हें कहा जाता है कि तुम्हें दो शरीर और एक आत्मा की तरह रहना है। **इसका अर्थ भी यही है कि चाहे शरीर दो हैं लेकिन दोनों की आत्मा एकमत होकर एक परमात्मा की याद में रहे।** ❖

बाबा ने दी परीक्षा में सफलता

● ब्रह्माकुमारी लता राजपूत, देउलगांव राजा (महा.)

मेरी पढ़ाई गांधी विचारधारा वाले स्कूल में हुई। वहाँ के सात्विक वातावरण में मुझे बहुत अच्छे संस्कार मिले। सन् 1997 में मुझे ईश्वरीय ज्ञान मिला और युगल को 2001 में। फिर हम दोनों नियमित रूप से ईश्वरीय ज्ञान की क्लास में जाने लगे। पहले घर का वातावरण अशांत था परंतु नियमित ज्ञान-योग करने से वातावरण सुधर गया है। श्रीमत प्रमाण दिनचर्या चलने से पूरा दिन आनंद और हलकेपन का अनुभव होता है लेकिन एक दिन बहुत बड़ा पेपर सामने आया।

मैं स्कूल में टीचर हूँ। सितंबर 29, 2010, सवेरे ज्ञान-योग करके, घर का कारोबार समेटकर स्कूल पहुँची, पढ़ाई शुरू हुई। आखिरी पीरियड में अचानक आँधी-तूफान, बरसात जोर से एकसाथ शुरू हुई। मैं भागकर क्लास के बाहर आई तो पीछे से क्लास का दरवाजा जोर से बंद हो गया। दरवाज़े के बंद होने की आवाज़ सुनते ही मैं झट से पीछे दौड़ी और ताकत लगाकर दरवाजा खोला। अंदर का दृश्य बहुत भयानक था। मैंने देखा, बच्चे ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहे थे। आँधी, तूफान ज़ोरों से चालू था। यह सब दृश्य देखते ही मुझे शिवबाबा की याद आई। ऐसा दृश्य बाबा ने ब्रह्मा बाबा को दिखाया था। बाबा की याद में मैंने 40-45 बच्चों को कक्षा से बाहर निकाला। दो-चार बच्चे पीछे रह गये थे, उन्हें लेने के लिए मैं थोड़ा आगे झुकी तो ऊपर से सीमेंट ईंट का बड़ा टुकड़ा (20-25 किलो) मेरी कमर से घिसटते हुए नीचे गिरा। उसे देखते ही मेरे मुख से बाबा शब्द निकला। मेरे पैर की हलचल बंद हो गई। कमर को ज़ोर से मुक्कामार लग गया। उसी कारण मैं भाग नहीं सकी। परमात्मा ने ही आगे झुकने की बुद्धि दी, नहीं तो 20-25 किलो का पत्थर मेरे सिर पर ही गिर जाता।

मैं दरवाज़े पर ही खड़ी रही। सिर पर सीमेंट ईंट के और टुकड़े भी गिर रहे थे लेकिन उनकी मार महसूस नहीं हो रही थी। बरसात तो इतनी तेज़ थी जैसेकि ऊपर से शावर शुरू है। टिन की छत पूरी तरह उखड़कर बाहर 15-20 फुट दूरी पर जा गिरी। बरामदे के टिन मेरे बाजू में गिरे थे। आजू-बाजू का सब वातावरण देखकर 'मृत्यु ने मुझे घेरा है' ऐसा लगने लगा। बाबा को याद करते-करते मेरी आँखें बंद हो गई। बाद में स्कूल के शिक्षक मुझे अस्पताल लेकर गये। मैं बच नहीं सकती थी लेकिन इतने तूफान में बची कैसे, यह आश्चर्य था। जो भी मिलने आते, वे भी आश्चर्य करते कि इतनी बड़ी आपत्ति में आप कैसे बच गईं। कहा जाता है, जाको राखे साइयाँ मार सके ना कोय..।

मेरी सखी ने कहा, ज़रूर आपके हाथ में जो पर्स था, उसमें भगवान का फोटो होगा, उसी फोटो ने आपको बचाया है। वो था बाबा का पासपोर्ट फोटो। उस फोटो के साथ रक्षाबंधन के दिन मिला हुआ स्लोगन कार्ड भी था जिस पर वरदान लिखा था, **'आप मन-बुद्धि की एकाग्रता द्वारा सर्व सिद्धियाँ प्राप्त करने वाली सदा समर्थ आत्मा हो।'** दिल से निकलता है, ओ बाबा, आपने कमाल कर दिया, इतना बड़ा पेपर मेरे सामने आया, उस पेपर में मैं पास विद ऑनर हो गई। इससे बड़ा भाग्य कौन-सा हो सकता है।

बाबा की, सेवाकेन्द्र की सभी बहनों की और ईश्वरीय परिवार के सभी भाई-बहनों की रूहानी दृष्टि, स्नेह और दुआ पाकर तबीयत में सुधार हो रहा है। मैं बड़ी खुशी के साथ कहना चाहती हूँ कि

दिल से कहो मेरा बाबा,
प्यार से कहो मेरा बाबा।
साथ निभायेगा, हाथ बढ़ायेगा,
निभाये वो पूरा वादा।

योग भट्ठी

● ब्रह्माकुमारी सुमन, अलीगंज

जब किसी चीज़ का आमूलचूल परिवर्तन करना हो या मूल्य बढ़ाने के लिए मूल स्वरूप में लाना हो तो उसे भट्ठी में डाला जाता है। कोई भी प्रक्रिया, जब अग्नि समान तेजस्वी रूप धारण कर किसी भी चीज़ को परिवर्तन कर दे तो उसे भट्ठी कहा जाता है। पिछले 2500 वर्षों से आत्मा पर अनवरत, पर्त दर पर्त विकारों की मैल चढ़ती गई, जिसको सहज छुड़ाना असंभव-सा लगने लगा। गुण धूमिल पड़ते गये, विकारों की इतनी खाद पड़ी कि आत्मा की कीमत कौड़ी तुल्य हो गई अत: आत्मा को पुन: मूल स्वरूप में लाने व उसका मूल्य बढ़ाने के लिए भट्ठी में डालना अनिवार्य है। जब अन्य कोई भी प्रक्रिया प्रभावी नहीं होती है तब भट्ठी का प्रयोग किया जाता है। भट्ठियाँ भी कई प्रकार की होती हैं –

1.धोबी की भट्ठी – धोबी की भट्ठी में गंदे से गंदे कपड़ों से पक्के दागों को छुड़ाकर साफ किया जाता है। इसी प्रकार, आत्मा को भी रोज ज्ञान-योग की भट्ठी में डालने से उस पर लगे पक्के दाग अथवा गंदे संस्कार छूट जाते हैं। टीवी, फैशन, अपशब्द तथा विकार – इन सबसे आत्मा पर जो मैलापन चढ़ा था या चढ़ता है, वह छूट जाता है।

2.कुम्हार की भट्ठी – इस भट्ठी में, मिट्टी के कच्चे बर्तनों को पकाने के लिए, धधकती आग में करीने से सेट किया जाता है। मिट्टी का बर्तन अग्नि को अपने में इस तरह समाता है कि खुद तो मजबूत बन जाता है पर गर्म चीज़ को शीतल करने लगता है। इसी प्रकार, आत्मा भी ज्ञान-योग की संगठित भट्ठी में पड़कर सुखदायिनी बन जाती है। योग की अग्नि से हमारे विचारों में स्थिरता, पवित्रता एवं समर्थी आती है जिससे हर परिस्थिति को झेलने में समर्थ हो जाते हैं और मधुरता के बल से दूसरों की क्रोधाग्नि को भी ठंडा करने में सफल होते हैं।

3.लोहार की भट्ठी – पुराने लोहे की जंक उतारने के लिए, पुराने यंत्रों की धार तेज करने के लिए एवं नये यंत्र बनाने के लिए लोहे को एकदम प्रज्वलित अग्नि में डाला जाता है जिससे वह बेहद मुलायम हो जाता है जिसके कारण उसे विभिन्न आकारों में ढाला जा सकता है पर इसके लिए उस पर काफी गहरी चोट देनी पड़ती है। इसी प्रकार आत्मा को जब लगन में मगन करने वाली भट्ठी में डालते हैं तब उसका अनेक प्रकार का जंक तो छूटता ही है साथ-साथ वह बेहद लचीली (Moulding Nature) हो जाती है और उसे देवताई स्वरूप में ढाला जा सकता है जिससे संपूर्ण सुखी समाज की रचना होती है।

4.स्वर्णकार की भट्ठी – इस भट्ठी में सोने को तपाया जाता है और उसके अंदर-बाहर की सभी अशुद्धियाँ निकाल दी जाती हैं। वह काफी मुलायम हो जाता है फिर विभिन्न आभूषण बनाये जाते हैं जिनसे व्यक्ति की सुंदरता में निखार आता है। इस प्रक्रिया से सोना अंदर से इतना चमकदार हो जाता है कि बनाने वाले की शक्ल उसमें दिखाई देने लगती है। इसी प्रकार आत्मा को ज्वाला स्वरूप तपस्या भट्ठी में डालते हैं तो इतनी तप जाती है कि उसमें अनादि-आदि सभी गुण बिना किसी खास पुरुषार्थ के सहज ही इमर्ज हो जाते हैं। उसकी सीरत में परमात्मा पिता की सूरत दिखाई देने लगती है।

भट्ठियों में बैठने से आत्मिक स्थिति के निम्नलिखित प्रकार के अनुभव होते हैं –

1.आत्मिक स्थिति – यह हमारी पहली और आखिरी स्थिति है अर्थात् हमारा आधार है और हमारे लिए अति आवश्यक है। आत्मिक स्थिति अर्थात् स्वयं को ज्योतिस्वरूप आत्मा समझना व अन्य को भी आत्मा समझना। इस

स्थिति के बिना हमारा ईश्वरीय जीवन ही नहीं चल सकता, बाबा की याद भी नहीं आ सकती। जैसे हम कमरे में बैठे हैं पर अपने को कमरे से अलग महसूस कर रहे हैं, ऐसे ही हम अपने को शरीर रूपी कमरे में मस्तक के बीच स्थित हुआ देखते हैं। इस अभ्यास से दैहिक समस्यायें अर्थात् देहभान से संबंधित सभी बातें सुलझाना सरल हो जायेगा। बाबा की याद भी स्वत: एवं सहज आयेगी।

2.देही अभिमानी स्थिति – यह स्थिति आत्मा की मालिकपन की स्थिति है अर्थात् नशे वाली स्थिति है कि मैं आत्मा राजा हूँ, सर्वशक्तिवान का बच्चा हूँ। इस स्थिति में स्वमान जाग्रत होता है और हीनभावना, दिलशिकस्ती व संशयात्मक वृत्ति खत्म होती है।

3.अशरीरी स्थिति – अशरीरी स्थिति अर्थात् शरीर से अलग होकर अपने को देखना। शरीर से अपने को बिल्कुल अलग करके, न्यारा हो जैसे दूसरे के शरीर को देखते हैं, ऐसे देखना। इस अभ्यास से मृत्यु का भय निकल जायेगा। अंत में जो होगा, वह सब देखने की शक्ति आ जायेगी। साक्षीपन, न्यारा व अनासक्त वृत्ति आ जायेगी।

4.विदेही अवस्था – देह से बिल्कुल अलग होकर, कर्मेन्द्रियों से करावनहार की स्मृति। सब कुछ करते, सबके साथ रहते, सब कुछ प्रयोग करते फिर भी साक्षी। देह से भी अनासक्त। इस अभ्यास से शरीर की आसक्ति खत्म होगी। लगाव-झुकाव, प्रभाव व दबाव से मुक्त रह ट्रस्टीपन आयेगा। कर्म करते भी डबल लाइट रहेंगे। सुख-दुख, निंदा-स्तुति, हार-जीत में समान रह पायेंगे।

5.बीजरूप स्थिति – एक पीपल एवं बरगद के छोटे-से बीज में जिस प्रकार विशाल पेड़ की सारी शक्ति समाहित रहती है पर दिखाई नहीं पड़ती, इसी प्रकार बीजरूप स्थिति अर्थात् संपूर्ण ड्रामा का ज्ञान समाया हुआ पर निरहंकारिता की पराकाष्ठा से परिपूर्ण। संपूर्ण शक्ति होने के बावजूद भी गुप्त। इस अभ्यास से सदा तृप्त आत्मा रहेंगे।

6.निराकारी एवं बिन्दु स्वरूप की स्थिति – बिन्दु रूप अर्थात् मैं आत्मा ज्योतिबिन्दु स्वरूप परमधाम में बाबा के सामने, जैसा बाबा वैसा ही मैं, कोई भेद नहीं, कोई चाहना नहीं, कामना नहीं, अवरोध नहीं। इस अभ्यास से आत्मा में सर्वगुण आते जायेंगे। मूल स्वरूप प्राप्त करने की खुशी होगी, उपराम होते जायेंगे, संपूर्ण शान्ति की व विकर्माजीत बनने की अनुभूति होगी। ❖

स्पर्श अदृश्य का

ब्र.कु. पंकज, इटावा

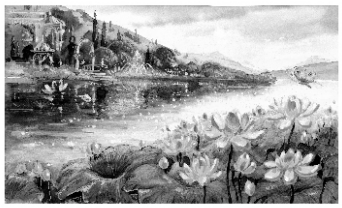

तुमने छुआ, हुआ जाने क्या
महका एक बसंत
महक गई श्वासों की दुनिया
बाबा महके ख्वाब अनंत

अंगुली देकर, प्यार जता कर
परी लोक की कथा सुनाकर
नैनों का स्पर्श दिया यूँ
दौड़ी मैं सुध-बुध बिसराकर
नयन-नयन की भाषा पढ़ते
मैं बन गई विहंग
बाबा महके ख्वाब अनंत

संकल्पों ही संकल्पों में
जाने तुमने क्या कह डाला
ख्वाबों के उस पार न जाने
किन ख्वाबों ने डेरा डाला
पाकर जिनको महका तन मन
सुख का रहा न अंत
बाबा महके ख्वाब अनंत

जीवन को न जाने कैसे
करके तुमने जादू-सा
चुपके-चुपके मोड़ा ऐसे
मिटा स्वयं पर काबू-सा
मैं बावरी भूल कर सुध-बुध
तेरी बनी तरंग
बाबा महके ख्वाब अनंत

ज्ञानामृत

● **मांगीलाल, नरसिंहगढ़ (राजगढ़)**

ज्ञानामृत पत्रिका ईश्वरीय ज्ञान से महकता हुआ फूलों का गुलदस्ता है। जो भी इसे देखता है, चुंबक की तरह खिंचा हुआ इसके पास चला आता है। पास आकर पूछता है, इसमें क्या है? यह किसकी पत्रिका है भाई साहब? ऐसा करने के लिए वह मजबूर हो जाता है चाहे वह किसी भी धर्म का क्यों ना हो। जब वह परिचय प्राप्त करता है तो ईश्वरीय विश्व विद्यालय में आकर साप्ताहिक कोर्स करने में रुचि दिखाता है। इस प्रकार ज्ञानामृत ईश्वरीय ज्ञान का परिचय देने में समर्थ (तत्पर) है। ज्ञानामृत को जो भी एक बार पढ़ लेता है, वह बार-बार पढ़ना चाहता है। ज्ञानामृत को पढ़ने वाला अन्य गंदे नॉवेल्स, पत्र-पत्रिकायें आदि पढ़ना बंद कर देता है। उसके मनोविकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार व आलस्य) आदि सब शांत हो जाते हैं। वह व्यसन (बीड़ी, सिगरेट, मांस, मदिरा) आदि का प्रयोग करना बंद कर देता है जो कि ईश्वरीय ज्ञान का प्रभाव है जिसे हम 'ईश्वरीय ज्ञान का जादू' भी कह सकते हैं।

ज्ञानामृत के अध्ययन के कई चमत्कारिक परिणाम देखने, सुनने को मिलते हैं। जैसे कि पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए पाठ्य पुस्तकें व शास्त्रों आदि को समझना सरल हो जाता है। बंद दिमाग के पट खुल जाते हैं। स्मरण शक्ति बढ़ जाती है। दिल को आराम मिलता है, मन मस्त हो जाता है, उसका इधर-उधर भटकना बंद हो जाता है। शरीर स्वस्थ हो जाता है। अंधविश्वास खत्म हो जाते हैं। अनपढ़ भी इसे सुनने में रुचि लेते हैं। मन की सोई हुई शक्ति जाग्रत हो जाती है।

'ज्ञान अमृत' में ज्ञान का मतलब है ईश्वरीय ज्ञान। जो इसको समझता है, उसके पापकर्म नष्ट हो जाते हैं और नर से श्रीनारायण, नारी से श्रीलक्ष्मी पद (देवी-देवता पद) प्राप्त करता है। अमृत का मतलब है कि जो इस ईश्वरीय ज्ञान को धारण करता है, वह 21 जन्मों के लिए अमर पद प्राप्त करता है। अंत मति सो गति (मुक्ति-जीवन्मुक्ति) के अनुसार, श्रेष्ठ गति को प्राप्त होता है।

ज्ञानामृत में मनन-मंथन किया हुआ ईश्वरीय ज्ञान है जो शिव भगवान आत्मा रूपी पार्वतियों को वर्तमान समय सुना रहे हैं। इसे सुनकर संस्कार परिवर्तन हो मन पवित्र, शुद्ध, निर्मल हो जाता है।

ज्ञानामृत को पढ़ने वाला कर्मों से दैवी जीवन (नया जीवन) प्राप्त करता है अर्थात् उसका जीवन ही बदल जाता है। उसका काम, खान-पान, विचार आदि सब बदल जाते हैं। उसके लिए पुण्य कर्मों के रास्ते खुल जाते हैं। घर-परिवार में अनिष्ट (अशुभ) आदि होना बंद हो जाता है। गंदी अशुद्ध आत्मा (भूत-प्रेत) आदि दूर भागने लग जाती हैं। इस प्रकार ज्ञानामृत एक अलौकिक जादू ही है।

ज्ञानामृत इसी कारण दिन दूनी, रात चौगुनी वृद्धि को प्राप्त हो रही है। प्रति माह लाखों ज्ञानामृत प्रेमी इसे पढ़कर जीवन को धन्य, पवित्र, महान व ऊँच बना रहे हैं जिसका प्रमाण पत्रिका में छपे सचित्र सेवा समाचारों के माध्यम से प्राप्त होता रहता है।

यह ज्ञानामृत सभी धर्मप्रेमियों के लिए है। ज्ञानामृत को पढ़ने वाली माताओं-बहनों को एक विशेष फल प्राप्त होना बताया गया है। इससे घर पवित्र, सुंदर, उत्तम, मंदिर जैसे सुंदर लगने लगते हैं। घरों में रहने वाले इंसान भी उत्तम, पवित्र, ऊँच, महान जीवन जीने लगते हैं। संतान शांतचित्त, प्रसन्नचित्त, हँसमुख तथा संस्कारयुक्त हो भाईचारे से श्रेष्ठ जीवन जीने लगती है। बुजुर्ग, माता-पिता, भाई-बंधु, पुत्र, परिवार आदि सब शांतिमय, खुशमिजाज रहने लगते हैं।

इसलिए मेरे भाइयो, बहनो एवं धर्मप्रेमियो, बंधुओ, आप सभी को इस ज्ञानामृत को खूब पढ़ना और पढ़ाना चाहिए। ❖

पश्चिम में योग का परचम फहराया

● ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश, आबू पर्वत

ईश्वरीय सेवार्थ तीन सप्ताह की यात्रा पर यू.के., स्पेन और पुर्तगाल जाने का कार्यक्रम अगस्त, 2011 में बना। यद्यपि यात्रा छोटी थी लेकिन प्राणप्रिय बाबा ने मुझे बहुत अच्छे अनुभव कराये, अनेकानेक आत्माओं से मिलने का सौभाग्य मिला, उनसे बहुत कुछ सीखने को मिला।

ज़्यादातर कार्यक्रमों में प्रश्नोत्तर एवं गाइडेड कामेन्ट्री से योग अभ्यास कराना हुआ, जिसे प्रतिभागियों ने दिल से सराहा। पश्चिम में भारतीय पुरातन योग के विषय में जानने और उसे व्यवहार में लाने के लिए लोगों में बहुत उत्सुकता है। मैंने अपनी यात्रा के दौरान पाया कि आज समस्त विश्व की निगाहें भारत की ओर हैं। उनके मन में भारत के लिए सम्मान भी है तो भावनाएँ भी हैं। मैं इस विशेष यात्रा के लिए निमित्त बनी मोहिनी दीदी (मधुबन) और जयंती दीदी का हृदय से आभारी हूँ।

विदेश यात्रा में पूछे गये कुछेक प्रश्न और उनके उत्तर ज्ञानामृत के सुधी पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत हैं :

मानचेस्टर (बर्तानिया) में नामीग्रामी लेखक ने पूछा –

प्रश्न:- वर्तमान समय जो आध्यात्मिक दिवालियापन (स्प्रिच्युअल बैंक्रप्सी) का दौर चल रहा है, कृपया उसके सम्भावित खतरों पर प्रकाश डालें?

उत्तर:- आध्यात्मिकता और मानवीय विकास व अस्तित्व का चोली-दामन का साथ है। ये एक-दूसरे के पूरक हैं। आज के मानव ने प्रगति का चरमोत्कर्ष प्राप्त कर लिया है लेकिन मानवीयता उससे दिनोंदिन दूर होती जा रही है। उदाहरणस्वरूप मनुष्य चन्द्रमा पर पहुँच गया लेकिन चाँद जैसी शीतलता उसके जीवन में नहीं आई है। अत: अध्यात्म अपनाना कोई विकास की गति को धीमा करना नहीं है। वस्तुत: यह तो समग्र विकास है, मानवीय सम्पूर्णता है। मेरी ऐसी मान्यता है कि आज के समय में जब मनुष्य मात्र एक यंत्र बन कर रह गया है, तब आध्यात्मिकता उसे मानवीय मूल्यों, मानवीय संस्कारों और विश्व-बधुत्व की ओर अभिप्रेरित करती है। यदि समय रहते हम नहीं चेते तो हमारा अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। अत: आइये, हम सब अपनी जड़ों की ओर मुड़ें, अपने महत्त्व को पहचानें और आध्यात्मिकता को अपनी सहचरी बनायें।

वर्दिंग (यू.के.) में एक गृहिणी ने पूछा –

प्रश्न:- आज स्कूली बच्चे हिंसा में लिप्त हो रहे हैं, घर में भी अभिभावकों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं, इसका क्या कारण है?

उत्तर:- आधुनिक बच्चे नेट, कम्प्यूटर, मोबाइल आदि से चिपके रहते हैं, जैसेकि उनकी यही दुनिया है। वास्तव में बच्चे वर्च्युअल वर्ल्ड में रहते हैं। विडम्बना यह है कि आज हम बच्चों को शिक्षा तो दे रहे हैं लेकिन संस्कार नहीं दे रहे हैं। बच्चों को वर्तमान समय शिक्षा और दीक्षा दोनों की ज़रूरत है। मात्र कागज़ी डिग्रियाँ उनका भला करने वाली नहीं हैं। मुझे इस संदर्भ में भारतीय गुरुकुल प्रणाली याद आ रही है, जब सभी बच्चों को एक साथ रहना, एक साथ पढ़ना और एक साथ खेलना होता था। बच्चे ऐसे वातावरण में बहुत व्यवहारिक ज्ञान सीख लेते थे, वे आत्म-निर्भर भी बनते थे तो गुरुओं के प्रति भी उनके मन में अपार श्रद्धा होती थी। बच्चों में बदलाव लाने के लिए अभिभावकों को आदर्श प्रस्तुत करने होंगे। बच्चे, बड़ों की नकल करते हैं। हम जैसा व्यवहार-बर्ताव करेंगे, बच्चे उसका ही अनुकरण करते हैं।

मैड्रिड (स्पेन) में एक व्यवसायी ने पूछा –

प्रश्न:- अर्थ व्यवस्था में अत्यधिक उतार-चढ़ाव आ रहे हैं, जिनसे तनाव बढ़ रहा है, कृपया हल सुझायें?

पुर्तगाल (लिस्बन): 'व्यक्तित्व विकास के लिए राजयोग' विषय पर प्रवचन करने के बाद समूह चित्र में ब्र.कु. आत्म प्रकाश भाई, ब्र.कु. मारा बहन तथा अन्य ।

उत्तर:- आज मनुष्य ज़्यादा घर बना कर, ज़्यादा बैंक बैलेंस करके, ज़्यादा गाड़ियाँ खरीद कर स्वयं को संतुष्ट और सम्पन्न बनाने के प्रयास में रत है जबकि वास्तविकता इसके विपरीत है। वर्तमान समय महात्मा गाँधी जी की नीति 'जीओ और जीने दो' को अपनाने की आवश्यकता है। आज जिनके पास धन है, वे और धनी होते जा रहे हैं जबकि निर्धन लोगों की निर्धनता बढ़ती जा रही है। आर्थिक अनियमितताओं के लिए मानव की लोभ वृत्ति ज़िम्मेवार है। हमें अपनी कमाई का कुछ हिस्सा बचा कर भविष्य के लिए जमा करना चाहिए जिससे अनिश्चतता समाप्त हो जाती है। अपनी आवश्यकताओं को सीमित करके भी आर्थिक समस्या से निपटा जा सकता है। हमारा व्यापार सदाचार वाला होना चाहिए। दूसरों की दुआएँ लेने से मन को शक्ति प्राप्त होती है और तनाव दूर हो जाता है।

लिस्बन (पुर्तगाल) में एक सैनिक ने पूछा –

प्रश्न:- क्या अधिक अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा दुनिया में शान्ति स्थापित हो सकती है?

उत्तर:- महात्मा गाँधी जी ने कहा था कि ग़लत साधन अपना कर कभी भी सही मंज़िल तक नहीं पहुँचा जा सकता है। हथियारों की अंधी दौड़ मानव को विनाश की ओर ले जा रही है। शान्ति स्थापना के लिए हथियार नहीं, दोस्ती का हाथ बढ़ाना होगा, विनाश की नहीं, विकास की बात करनी होगी। शान्ति की शुरूआत मेरे से हो, मैं ही शान्ति दूत बन जाऊँ, मैं दूसरों को भी निरन्तर शान्ति का दान देता रहूँ। राजयोग मेडिटेशन के द्वारा शान्ति स्थापना का कार्य सहज किया जा सकता है।

प्रश्न : पोर्टो (पुर्तगाल) में एक पादरी ने मेडिटेशन के फायदों के विषय में पूछा।

उत्तर:- प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा सिखाया जाने वाला योग न केवल समय की आवश्यकता है अपितु सुख-समृद्धि की कुँजी भी है। राजयोग के निरन्तर अभ्यास से मानवीय जीवन में आनन्द, प्रेम, शान्ति, शक्ति, पवित्रता आदि-आदि गुणों का प्रादुर्भाव होता है। साथ ही सहनशक्ति, समाने की शक्ति, सामना करने की शक्ति, परखने की शक्ति आदि भी व्यवहारिक जीवन में आ जाती हैं। योग का अभ्यास मनोबल और आत्मबल को बढ़ा देता है परिणामस्वरूप, मनुष्य किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त कर लेता है। मन ठीक रहने से उसका सीधा प्रभाव तन पर पड़ता है। योग ही जीवन में समरसता लाने की चाबी है, समय प्रबन्धन की अचूक विधि है एवं नकारात्मकता को समूल नष्ट करने की सरल तकनीक है। राजयोग मानव को महामानव व सम्पूर्ण रोग मुक्त बनाने की रामबाण औषधि है।

बार्सिलोना, स्पेन में एक अधिकारी ने पूछा –

प्रश्न:- मैं सदा काम का दीवाना (वर्कहॉलिक) व्यक्ति हूँ, फलत: सदैव व्यस्त रहता हूँ, परिवार और समाज से कट-सा गया हूँ। कृपया इससे बाहर निकलने का रास्ता बतायें।

उत्तर:- कार्य करना कोई बुरी बात नहीं है, कर्म करना तो

अवश्य ही हरेक का लक्ष्य होना चाहिए। मनुष्य की पहचान उसके काम से ही होती है लेकिन कार्य की अति में चले जाना, कार्य के चक्कर में घर-परिवार को भुला देना अच्छी बात नहीं है। आपको स्व-जीवन में संतुलन लाने की आवश्यकता है। हम बचपन में एक कविता पढ़ा करते थे, जिसका सार यही था कि मनुष्य को काम के समय पर काम करना चाहिए, खेलने के समय पर खेलना चाहिए, यही खुश रहने की चाबी है। अत: मैं आपको यही राय देना चाहूँगा कि आप प्रात: थोड़ा जल्दी उठकर राजयोग को सारे दिन की दिनचर्या में शामिल करें। ऐसा करने से आपकी कार्य क्षमता भी बढ़ेगी और घर-परिवार के लोग भी संतुष्ट रहेंगे।

मैड्रिड, स्पेन में एक वृद्ध ने पूछा –

प्रश्न:- मुझे रातों रात नींद नहीं आती है, कृपया कोई युक्ति बतायें।

उत्तर:- नींद का हमारे संकल्पों से सीधा संबंध है। जितने संकल्प गुणवत्ता वाले, सकारात्मक और विश्व कल्याणार्थ होंगे, उतनी ही नींद की गुणवत्ता बढ़ेगी। स्थूल कार्यों में हाथ बँटाने से शरीर थकता है जिससे नींद आने में मदद मिलती है। रात्रि को सोने से कुछ समय पूर्व अपना मोबाइल बंद कर दें, टेलीविजन का स्विच बंद कर दें तथा दिनचर्या को अपने सामने लाएँ। जो अच्छे कार्य किये, उनके लिए ईश्वर का धन्यवाद करें और कोई ऐसा-वैसा काम हो गया हो तो परमात्मा से क्षमा माँग लें और आगे न करने का वायदा करें। ऐसा करने से मन हल्का हो जाता है और गहरी नींद आ जायेगी। सवेरे उठकर कुछ समय के लिए राजयोग का अभ्यास करने से भी अनिद्रा से छुटकारा पाया जा सकता है।

बार्सिलोना, स्पेन में एक खिलाड़ी ने पूछा –

प्रश्न:- मैं अपने कैरियर के विषय में अत्यन्त अनिश्चिन्त हूँ, कृपया कोई समाधान सुझायें।

उत्तर:- वर्तमान में रहना सीखें। वर्तमान ही मेरे भविष्य की कुँजी है। मैं जितना अधिक मेहनत इस समय करूँगा, उतना ही उज्ज्वल भविष्य मेरा बनेगा। स्वयं में विश्वास व भगवान में आस्था मेरी राह को और आसान कर देती है। राजयोग के माध्यम से हमारे में एकाग्रता और फुर्तीलापन आता है जोकि किसी भी खेल में सफलता की चाबी है। मैं आपके उज्ज्वलतम खेल भविष्य की कामना करता हूँ।

मानचेस्टर, यू.के. में एक महिला ने पूछा –

प्रश्न:- मुझे अनुमान लगाने की आदत है, क्या मैं इससे मुक्त हो सकती हूँ?

उत्तर:- अनुमान की बीमारी बहुत खतरनाक है जो व्यक्ति को अंदर-ही-अंदर खोखला और निर्बल बना देती है। अनुमान लगाने वाले के सारे दिन व्यर्थ संकल्प चलते रहते हैं, वह परचिंतन करता रहता है, परिणामस्वरूप उसका स्वयं पर ध्यान ही नहीं जाता है। अनुमान हमें स्वमान से गिरा देता है, अनुमान परमात्मा से दूर ले जाता है। इस रोग से मुक्ति हेतु अपने आपको व्यस्त रखें, प्रात: उठकर स्व-चिंतन, परमात्म-चिंतन और सकारात्मक चिंतन करें जिससे आपका आत्म-बल बढ़ेगा। दूसरों के विषय में सदैव अच्छा सोचें, सभी इंसान अच्छे हैं, परमात्मा पिता की संतान हैं। दूसरों की विशेषताओं को देखने से उनके प्रति मन में स्नेह आ जाता है और हर प्रकार की शंका दूर हो जाती है।

प्रश्न : लिस्बन, पुर्तगाल में एक युवा ने व्यक्तित्व में निखार लाने के विषय में जानना चाहा।

उत्तर:- एक बाहरी व्यक्तित्व है जबकि दूसरा आन्तरिक व्यक्तित्व है। आज के युवाओं का ज़्यादा ख्याल बाह्य रूप से ठीकठाक रहने में लगा रहता है जबकि इससे कई गुणा ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है हमारा आन्तरिक व्यक्तित्व। गुण, विशेषताएँ, चरित्र आदि मिल कर हमारे आन्तरिक व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। आध्यात्मिकता एवं राजयोग इसमें चार चाँद लगा देते हैं। राजयोग के द्वारा हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास हो जाता है तथा व्यक्तित्व चुम्बकीय व प्रभावशाली बन जाता है। ❖

ज्ञानामृत की 'ज्ञान दान योजना' के अंतर्गत 'वरदानी', 'महादानी' तथा 'दानी' टाइटल प्राप्त करने वाले बहन-भाइयों के नाम

वरदानी

करण- नौतनवा (300)
उमा उनियाल- देहरादून सु. नगर (261)
किरण- रूड़की (260)
चेतन- राजकोट (200)
अनिल- शामली (200)
हरीश- सिरसा शान्ति सरोवर (200)

महादानी

किरण- रूड़की (160)
शीला- न्यू मुंबई वाशी (130)
जसमेर- जींद (125)
संगीता- राजकोट रा. (125)
रविन्द्र- सिरसा शान्ति सरोवर (125)
गुरदीप- सिरसा शान्ति सरोवर (125)
रामप्रसाद सोनी- बेतुल (121)
लालजी चोवाटिया- राजकोट राज. (115)
अनिल- जींद (110)
दीपक जाधव- कोपरगांव (105)
निर्मला- नांगलोल (105)
सुभाष- कोपरगांव (101)
घनश्याम- राजकोट राजनगर (101)
ओमप्रकाश- राजकोट (101)
हरभजन- सिरसा शान्ति सरोवर (100)
सोनिया- सिरसा शान्ति सरोवर (100)
पूनम- सिरसा शान्ति सरोवर (100)
सुनीता- हरिद्वार (100)
ओम भाई- आबू रोड (100)
रोहताश- दिल्ली (100)
रीटा- राजकोट राजनगर (100)
सुरभि- शामली (100)

दानी

मीरा - मुंबई सानापाडा (94)
प्रदीप- बड़ौदा मंगलवाडी (75)
राजकुमार अग्रवाल- समस्तीपुर (75)
विनोद सिंह- समस्तीपुर (75)
गोपाल प्रसाद- समस्तीपुर (75)
शंभू प्रसाद- समस्तीपुर (75)
गणेश- कोपरगांव (70)
विनय- गुमला (70)
राजेन्द्र सोलंकी- मुंबई मालाड पू.(69)
तुषार- कोपरगांव (67)
रमेश चौधरी- समस्तीपुर (66)
जगदीश- सिरसा शान्ति सरोवर (65)
गायत्री- सिरसा शान्ति सरोवर (65)
नीलम - रूड़की (64)
रतन भाई- देहरादून सु. नगर (63)
विजयलक्ष्मी- देहरादून रा. रोड (61)
श्रीकांत- कोपरगांव (61)
नरेन्द्र- कोपरगांव (61)
सरयू राउत- कोपरगांव (60)
ऋतंभरा- कोपरगांव (60)
विष्णु- कोपरगांव (60)
महेश- कोपरगांव (57)
दिलीप- कोपरगांव (56)
चंद्रबिहारी गर्ग- हिण्डौन सिटी (55)
विजय कोल्हाटे- कोपरगांव (55)
भूषण- कोपरगांव (55)
किशोर सोलंकी- मुंबई गोरेगांव (55)
ज्योति- मण्डला (55)
देसिया नरेन्द्र- राजकोट (55)
शुभांगी- मुंबई बेलापुर (54)
गणेश गवहाने- कोपरगांव (54)
सरोज- नजीबाबाद (53)
अब्दुल- कोपरगांव (53)
नवनाथ- कोपरगांव (52)
विनोद मोदी- समस्तीपुर (52)
प्रफुल्ल पंचाल- वापी (51)
स्नेहलता कोल्हे- कोपरगांव (51)
विजया बहन- कोपरगांव (51)
पुष्पा ताई काले- कोपरगांव (51)
मोहन भाई- कोपरगांव (51)
सुभाष पाटिल- येवला (51)
लता- नजीबाबाद (51)
राजरानी- जींद (51)
अतुल- बड़ौदा मंगलवाडी (51)
महेश- हिण्डौन सिटी (50)
ज्योति रावल- खजुराहो (50)
लक्ष्मी मगरिया- खजुराहो (50)
आरती- खजुराहो (50)
हरिराम टीकमे- बेतुल (50)
आर.सी.कपूर- देहरादून रा.रोड (50)
प्रदीप- हरिद्वार (50)
कमल- हरिद्वार (50)
आशा- ऋषिकेश (50)
शकुंतला- रूड़की (50)
भानु भाई- रूड़की (50)
राजेन्द्र- दिल्ली (50)
वैशाली- कोपरगांव (50)
संजय भाई- येवला (50)
विमल माता- येवला (50)
डॉ. मुंडे भाई- येवला (50)
सुजीत- कोपरगांव (50)
योगिता- कोपरगांव (50)
अशोक- ढिगावा मण्डी (50)
संगम- सिरसा शान्ति सरोवर (50)
उमेद सिंह- सिरसा शान्ति सरोवर (50)
निर्मल- सिरसा शान्ति सरोवर (50)
शिवकुमार- जींद (50)
रामराव चितुरी- वापी (50)

दोषदृष्टि दूर करें

● ब्रह्माकुमार भगवान, शान्तिवन

एक बार एक शिष्य ने अपने गुरु से यह वरदान मांगा कि 'सबके हृदय में उसके प्रति क्या सोच है', यह जानने की शक्ति वह प्राप्त कर ले। गुरु ने उसे तथास्तु कहकर एक छड़ी दी और बताया कि छड़ी को हृदय से लगाकर जिस व्यक्ति का नाम लेगा, उसकी भावना का पता चल जायेगा।

शिष्य ने पहला प्रयोग गुरु पर ही कर डाला और उसके हृदय में अपने प्रति कालापन पाकर सत्संग करना बंद कर दिया। गुरु को शंका हुई, उन्होंने शिष्य से कारण पूछा, शिष्य ने असली कारण बता दिया। तब गुरु ने कहा, छड़ी को अपने हृदय से लगाकर अपना नाम लो। शिष्य ने ऐसा ही किया और पाया कि उसके हृदय में तो सबके लिए कालापन भरा था। वह बहुत शर्मिन्दा हुआ और पुनः सत्संग में आना शुरू कर दिया।

उमंग-उत्साह कम कर देती है दोषदृष्टि

यह कहानी ज्ञान-मार्ग के पुरुषार्थियों की भी है। कई ब्रह्मावत्स ज्ञान-मार्ग में उमंग-उत्साह से चलते हैं। स्थूल सेवा, धन की सेवा उमंग-उत्साह से करते हैं लेकिन कभी-कभी दूसरों के प्रति दोषदृष्टि रखने से उनका उमंग-उत्साह कम हो जाता है। निमित्त आत्माओं के दोष देखने शुरू करते हैं तब यह ज्ञान मार्ग कठिन महसूस होने लगता है। व्यर्थ चिन्तन, परचिन्तन, नकारात्मक चिन्तन के कारण योग का अनुभव नहीं होता। ऐसा साधक संगठन से किनारा करने लगता है। ईर्ष्या, घृणा, क्रोध आदि अवगुण आने लगते हैं। दोषदृष्टि मुरली से भी दूर कर देती है। पूछे जाने पर अनेक बहाने करते हैं, कारण बताते हैं। परमात्मा शिव कहते हैं, पढ़ाई कभी भी नहीं छोड़ो। इसके लिए ड्रामा को समझना, हरेक के पार्ट को समझना, हरेक की विशेषता को समझना आवश्यक है तभी दोषदृष्टि की माया से दूर रह सकेंगे।

दोषदृष्टि से कट जाता है अपना भाग्य

दूसरों के दोष वा कमी-कमज़ोरी को देखने से स्वयं का ही नुकसान होता है। आकाश में थूकने से जैसे थूक अपने ऊपर ही आता है उसी तरह दूसरों के दोष देखने से वे स्वयं में भर जाते हैं। इसलिए स्वयं का ही परिवर्तन करना है। दोष देखने के बजाय दूसरों का ज्ञान-योग का अभ्यास, उनकी सेवा, उनके जीवन की धारणाएँ, विशेषतायें आदि-आदि बातों को ही देखें। अगर उनमें थोड़ी

कमी-कमज़ोरी रही हुई है तो भी वे दूसरों की सेवा तो कर ही रहे हैं, तपस्या भी कर रहे हैं, धारणा भी कर रहे हैं जिससे कमियाँ निकल जायेंगी। जिस प्रकार चाकू खरबूज़े पर पड़े या खरबूज़ा चाकू पर, कटेगा तो खरबूज़ा ही, इसी प्रकार दोषदृष्टि से कटेगा अपना ही भाग्य। अवगुणों को देखने से संकल्प, वृत्ति, बोल, व्यवहार, आचरण नकारात्मक बन जाते हैं जिससे आत्म-चिन्तन, परमात्म चिन्तन, मनन-चिन्तन नहीं हो सकता। नकारात्मक चिन्तन करने वालों का संगमयुगी अनमोल समय, संकल्प, श्वास व्यर्थ हो जाते हैं, आपसी मनमुटाव बढ़ते हैं और संगठन में बिखराव पैदा हो जाता है।

निर्दोष दृष्टि महासुखकारी

वर्तमान समय दोषदृष्टि ही सर्व

समस्याओं का मूल कारण है। इसलिए कहा भी जाता है, 'निर्दोष दृष्टि महासुखकारी।' परमात्मा भी कहते हैं, देखना हो तो दूसरों की विशेषता देखो, अवगुणों को मत देखो। **जिसमें अवगुण हैं वह तो अपने उन अवगुणों को निकालने का पुरुषार्थ करता है तो हम उन अवगुणों को अपने चित्त में क्यों रखें। दूसरों के दोषों का वर्णन करते समय हमारे मन-बुद्धि अस्वच्छ बन जाते हैं।** अस्वच्छ मन-बुद्धि वाले का मन परमात्मा में एकाग्र नहीं होगा। जिस प्रकार सवेरे-सवेरे कचरा बीनने वाले, कचरे को बोरी में इकट्ठा करते हैं उसी प्रकार दूसरों के अवगुणों को देखना वा दोषों को देखना – यह भी कचरा बीनने के समान है। इसके बजाय होलीहंस बन हरेक के अंदर के गुण रूपी मोती चुगने हैं। तभी सरस्वती माँ अर्थात् ज्ञान, बुद्धि में बैठ सकता है।

अवगुणों का वा दोषों का वर्णन करने वालों के संग से भी हमें दूर रहना है। दूसरों के अवगुणों का वर्णन करने वाला हमारा दुश्मन है क्योंकि जिसके अवगुण हम सुनते हैं, उसके प्रति हमारी वृत्ति, भावनायें, व्यवहार खराब हो जाता है। ऐसे व्यक्ति के बारे में घृणा, ईर्ष्या बढ़ती है। उसके प्रति हम शुभचिन्तक नहीं बन सकते। जैसी वृत्ति, भावना वैसा ही वायुमण्डल बनता है। ऐसी परिस्थिति में हम अंतर्मुखी, एकाग्र, शान्तचित्त व एकरस स्थिति में बैठकर प्रभु चिन्तन वा आत्म-चिन्तन नहीं कर सकते। इसलिए दोषदृष्टि से मुक्त बनने की आवश्यकता है।

परमात्मा को हर एक्टर पसंद है

यह संसार एक नाटक है। इस नाटक का दिग्दर्शक स्वयं परमात्मा है। प्रत्येक मनुष्य इस नाटक का एक्टर (कलाकार) है, हर एक्टर परमात्मा को पसंद है। इन कलाकारों के द्वारा यही खेल हर पाँच हज़ार वर्ष बाद फिर से रिपीट होता है। जब हर एक्टर परमात्मा को पसंद है तो फिर हम क्यों उस एक्टर के दोषों वा अवगुणों को देखकर उनका चिन्तन, वर्णन कर अपना अनमोल समय, श्वास, संकल्प व्यर्थ गंवाते हैं। अगर इस नाटक का आनन्द लेना है तो जिन विशेषताओं वा गुणों को देखकर उस एक्टर को इस नाटक में भूमिका दी गई है, हम भी उन्हीं गुणों व विशेषताओं को देखें।

हीरों का व्यापार कीजिए, कोयलों का नहीं

अवगुण देखना अर्थात् कोयले का व्यापार करना। कोयले के व्यापार में हम भी काले, तो कपड़े भी काले और फायदा भी इतना नहीं होता। याद रहे, कोयले की खानों में हीरे छिपे रहते हैं। अगर कोई हीरे का व्यापार करता है तो उसमें आमदनी बहुत ज्यादा मिलती है। जिस व्यक्ति के अंदर अवगुण रूपी कोयले देख रहे हैं, उसी के अंदर ही गुण रूपी हीरे भी छिपे हुए हैं। उन गुण वा विशेषता रूपी हीरों को देख उनका मनन, चिंतन कर दूसरों को सुनाने से स्वयं का भी फायदा और दूसरों का भी फायदा होता है। इसलिए दोषदृष्टि वा अवगुण दृष्टि को खत्म करेंगे तो जीवन की सभी समस्याएँ वा विघ्न खत्म हो जायेंगे और हम सदा हल्के रहेंगे, वायुमण्डल भी अच्छा बन जायेगा, आपसी संबंधों में मधुरता आयेगी जिससे हम आत्म-चिन्तन और परमात्म चिन्तन भी सहज कर सकेंगे, यही है वर्तमान समय का पुरुषार्थ।

जिस प्रकार हर माँ-बाप को अपना बच्चा, चाहे कैसा भी हो, प्यारा होता है उसी प्रकार इस सृष्टि पर हर आत्मा कैसी भी है, परमात्मा को प्रिय है। अगर परमात्मा की प्रिय आत्मा के अवगुणों या दोषों का वर्णन करेंगे तो परमात्मा का प्यार कैसे मिलेगा। इसलिए परमात्मा से प्रेम करने से पूर्व परमात्मा की रची हुई सृष्टि की हर आत्मा से प्रेमपूर्वक व्यवहार करने की आवश्यकता है तब हम परमात्मा के प्यार के पात्र बन सकते हैं। ❖